पंद्रह रुपए

वर्षः ३, अंक : २०
०७ जुलाई, २०२३

RNI-UPHIN/2021/79954

खुले दिमाग़ के खुले विचार

ओपन डोर

राष्ट्रीय साप्ताहिक समाचार–पत्र

आजादी का 75 अमृत महोत्सव

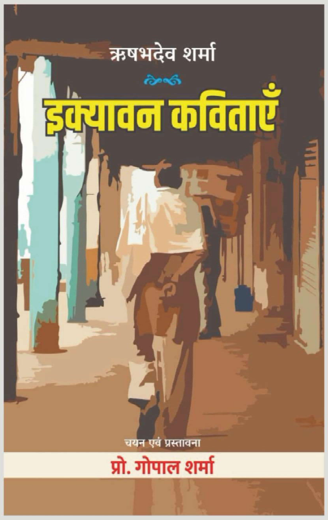
ऋषभदेव शर्मा
इक्यावन कविताएँ
चयन एवं प्रस्तावना
प्रो. गोपाल शर्मा


पंजी. संख्या UPHIN/2018/77444
ISSN 2582-1288
₹ 200
वर्ष : 5 अंक : 1 दिसंबर,2022-फरवरी, 2023
शोधादर्श
संदर्भित एवं समीक्षित शोध आलेखों की त्रैमासिक पत्रिका
गुरु गोबिन्द सिंह
प्रो. ऋषभदेव शर्मा विशेषांक
प्रेम बना रहे

शोधादर्श के प्रो. ऋषभदेव शर्मा विशेषांक पर आधारित

‘प्रेम बना रहे’ समीक्षा विशेषांक

खुले दिमाग़ के खुले विचार

ओपन डोर

राष्ट्रीय साप्ताहिक समाचार-पत्र

नियमित ग्राहक बनें

खुले दिमाग़ के खुले विचार
ओपन डोर
राष्ट्रीय साप्ताहिक समाचार-पत्र

Title-Code-UPHIN49431/RNI-UPHIN/2021/79954/MSME-UDYAM-UP-17-0002703

समयावधि	रुपए डाक खर्च सहित	पीडीएफ/प्रिंट अंक	विशेषांक
वार्षिक	- १०००	४८	४
द्विवार्षिक	- १६००	९६	८
पंचवार्षिक	- ४५००	२४०	२०

रजि. पता- ए/7, आदर्श नगर, तातारपुर लालू, नजीबाबाद-246763 बिजनौर, उप्र संपादकीय कार्यालय- साईं एंक्लेव, निकट धनौरा देवता, नजीबाबाद-246763 बिजनौर, उप्र
Bank- INDIAN OVERSEAS BANK, Branch- NAJIBABAD AC- 368602000000245/ IFSC- IOBA0003686 PAN- AABAO7251R
Email- opendoornbd@gmail.com / Mob.- 9897742814

खुले दिमाग़ के खुले विचार
ओपन डोर
राष्ट्रीय साप्ताहिक समाचार-पत्र

Title-Code-UPHIN49431   RNI-UPHIN/2021/79954

रजिस्टर्ड पता- ए/7, आदर्श नगर, तातारपुर लालू, नजीबाबाद-246763 बिजनौर, उप्र
संपादकीय कार्यालय- साईं एंक्लेव, निकट धनौरा देवता, नजीबाबाद-246763 बिजनौर, उप्र
Email- opendoornbd@gmail.com   Mob.- 9897742814

'ओपन डोर' साप्ताहिक समाचार पत्र में
शुभकामना संदेश/विज्ञापन प्रकाशित करवाने के संदर्भ में

विज्ञापन दर निम्नवत है-

क्रम	विज्ञापन स्थान संपूर्ण पृष्ठ	मूल्य रुपए में	विज्ञापन स्थान आधा पृष्ठ	मूल्य रुपए	विज्ञापन स्थान चौथाई पृष्ठ	मूल्य रुपए
1	कवर पृष्ठ अंतिम (रंगीन)	26,000.00	कवर पृष्ठ अंतिम (रंगीन)	13,000.00	कवर पृष्ठ अंतिम (रंगीन)	7,000.00
2	कवर पृष्ठ २ या ३ (रंगीन)	22,000.00	कवर पृष्ठ २ या ३ (रंगीन)	11,000.00	कवर पृष्ठ २ या ३ (रंगीन)	6,000.00
3	आन्तरिक पृष्ठ (रंगीन)	20,000.00	आन्तरिक पृष्ठ (रंगीन)	10,000.00	आन्तरिक पृष्ठ (रंगीन)	5,000.00
4	श्वेत श्याम पृष्ठ	10,000.00	श्वेत श्याम पृष्ठ	5,000.00	श्वेत श्याम पृष्ठ	2,500.00

तकनीकी जानकारी- आकार- २१.५x२७.५ सेमी,   प्रिंट एरिया- १८x२५ सेमी,   कॉलम- ३ (कॉलम की चौड़ाई ५.५ सेमी.) लगभग,   पृष्ठ- आवरण सहित ३६

क्लासीफाईड– कम से कम 500 रुपए   विशेष– एक साथ पांच या उससे अधिक बार विज्ञापन प्रकाशन पर विशेष छूट का प्रावधान है।

भुगतान के लिए बैंक खाता विवरण

"Open Door" INDIAN OVERSEAS BANK, NAJIBABAD,
AC- 368602000000245   IFSC- IOBA0003686

खुले दिमाग़ के खुले विचार
ओपन डोर
राष्ट्रीय साप्ताहिक समाचार-पत्र

साक्षात्कार और खबरों के
चैनल को सबस्क्राइब करें

Subscribe

सर्च करें : ओपन डोर न्यूज

ओपन डोर न्यूज यूट्यूब चैनल हेतु आवश्यकता
है प्रतिनिधि की

https://www.youtube.com/@OPENDOORNews

https://opendoornews.in

RNI-UPHIN/2021/79954
MSME-UDYAM-UP-17-0002703

पंद्रह रुपए
खुले दिमाग के खुले विचार
ओपन डोर
राष्ट्रीय साप्ताहिक समाचार-पत्र

वर्ष : ३, अंक : २०, ०७ जुलाई, २०२३

संपादक
अमन कुमार
प्रबंध संपादक
सौरभ भारद्वाज

प्रतिनिधि
डॉ. सुशील कुमार त्यागी 'अमित' (हरिद्वार)
उपेन्द्र सिंह (दिल्ली)
अर्चना राज चौबे (नागपुर)
निधि मिथिल (सतारा)
अतुल शर्मा (मेरठ)

कार्यालय प्रमुख
तन्मय त्यागी

संपादकीय कार्यालय
साई एंक्लेव, निकट धनौरा देवता,
नजीबाबाद- २४६७६३ बिजनौर (उप्र)
सदस्यता प्राप्त करें
एक साल १००० रुपए, दो साल १६०० रुपए
पांच साल ४८०० रुपए
अंक की हार्ड कॉपी न मिल पाने की दशा में पीडीएफ मिलेगी

भुगतान करें
Ac. Name - OPEN DOOR
Bank- INDIAN OVERSEAS BANK
Branch- NAJIBABAD
AC- 368602000000245
IFSC- IOBA0003686
PAN-AABAO7251R

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक अमन कुमार द्वारा आशीष प्रिंटर्स, मोहल्ला मकबरा, नजीबाबाद से मुद्रित तथा ए-७, आदर्श नगर, तातारपुर लालू, नजीबाबाद- २४६७६३ ज़िला बिजनौर (उ.प्र.) से प्रकाशित।
संपादक-अमन कुमार
मोबाईल नं.- 9897742814
E-Mail- opendoornbd@gmail.com
RNI-UPHIN/2021/79954

अतिथि संपादकीयम्

'शोधादर्श' : प्रो. ऋषभदेव शर्मा पर आधारित 'प्रेम बना रहे' समीक्षा विशेषांक

'ओपन डोर' का यह अंक इस अर्थ में विशिष्ट है कि यह एक अन्य पत्रिका के विशेषांक पर केंद्रित है। दरअसल, शोध पत्रिका 'शोधादर्श' ने दिसंबर २०२२-फरवरी २०२३ में तेवरी काव्यविधा के प्रवर्तक प्रतिष्ठित कवि प्रो. ऋषभदेव शर्मा के व्यक्तित्व और कृतित्व के विवेचन पर केंद्रित 'प्रेम बना रहे' शीर्षक विशेषांक पाठकों के सामने रखा था। इसे पाठकों का भरपूर स्नेह प्राप्त हुआ। इस पर इतनी समीक्षाएँ आईं कि उन सबको समेटते-समेटते 'ओपन डोर' का यह विशेषांक तैयार हो गया!

इस बीच इसी वर्ष साहित्य रत्नाकर, कानपुर से प्रो. ऋषभदेव शर्मा की एक और काव्यकृति 'इक्यावन कविताएँ' भी आ गई। यहाँ एक बात आपसे साझा करना चाहूँगी कि इस कृति का अंग्रेजी अनुवाद प्रो. गोपाल शर्मा ने 'इन अदर वर्ड्स' नाम से किया है जो पहले ही २०२१ में प्रकाशित हो चुका है। अनूदित कृति सामने आई तो सबको लगा कि मूल कविताओं का भी संकलन आना जरूरी है, जो ७ अलग-अलग संकलनों से स्वयं अनुवादक ने चुनी हैं। इस प्रकार 'इक्यावन कविताएँ' का अवतरण हुआ। इन दोनों पुस्तकों पर भी गहरी चर्चा इस विशेषांक में शामिल है।

और हाँ! कृतिकार की कोई रचना न हो बल्कि सिर्फ उन पर केंद्रित समीक्षाएँ ही हों तो स्वाद में कुछ कमी लगती। अतः पाठकों के आस्वादन हेतु ऋषभदेव शर्मा की १३ तेज-तर्रार तेवरियों के साथ ही हमने उनके उस अदृश्य कथाकार रूप को सामने लाने का प्रयास किया जो आज तक नेपथ्य में है। पाठक उनके कवि, संपादक, आलोचक और समीक्षक रूप से तो परिचित हैं ही, पर हमने इस अंक में उनकी १० लघुकथाएँ और १ कहानी 'परिणीता' प्रकाशित करके उनके कथाकार को परदे के सामने लाने का भी प्रयास किया है। ये रचनाएँ भी उनकी वैचारिकता के ही अनुकूल हैं। आशा है, पाठक उनके कथाकार रूप का भी सम्यक अवलोकन करेंगे और अपनी प्रतिक्रियाओं से अवगत कराएँगे।

डॉ. गुर्रमकोंडा नीरजा
अतिथि संपादक

अनुक्रम

साहित्यकार ऋषभ के व्यक्तित्व और कृतित्व का समग्र आकलन

डॉ. सुषमा देवी

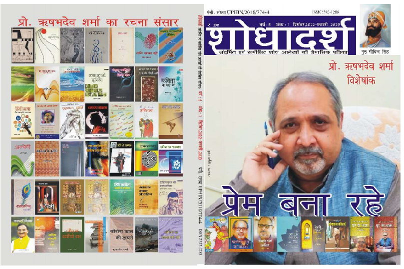

नजीबाबाद (उत्तर प्रदेश) से प्रकाशित त्रैमासिक शोध पत्रिका 'शोधादर्श' द्वारा हिंदी भाषा-साहित्य के चर्चित हस्ताक्षर प्रोफेसर ऋषभदेव शर्मा के रचना संसार पर आधारित विशेषांक 'प्रेम बना रहे' को पाँच खंडों में विभाजित करते हुए प्रकाशित किया गया है। प्रथम खंड 'आखिन की देखी' में प्रो. ऋषभदेव शर्मा के सान्निध्य में आए विभिन्न साहित्यकारों, मित्रों और छात्रों के स्वानुभूतिमय क्षणों का अंकन रोचक और जानकारीपूर्ण है। 'प्रसन्नवदनं ध्यायेत सर्वविघ्नोशांतये' लेख में प्रवीण प्रणव ने अपनी साहित्यिक यात्रा की दृढ़ता का श्रेय ऋषभदेव शर्मा को देते हुए कहा है कि न जाने कितने ही नवांकुरों का इन्होंने मार्गदर्शन किया और उन्हें साहित्य की मुख्यधारा से जोड़ा है (पृष्ठ-५)। उन्होंने लिखा है कि भारतीय गुरु-शिष्य परंपरा की अबाध धारा प्रोफेसर शर्मा के माध्यम से निरंतर बहती रही है। प्रो. शर्मा की अहर्निश साहित्य साधना को देखते हुए उनकी समक्ष व्यस्तताओं का पिटारा खोलना अत्यंत कठिन कार्य है। विविध साहित्य-अनुष्ठानों में संलग्न प्रो. शर्मा संवाद में विश्वास करते हैं और स्वयं को वाद-प्रतिवाद से बचा कर रखते हैं। प्रो. शर्मा का पचासों किताबों का लेखन कार्य हो अथवा वक्तव्य, सतसइया के दोहरे से प्रतीत होते हैं। वरिष्ठ तेलुगु साहित्यकार आचार्य एन.गोपि ने 'धन्य पुरुष' नामक अपनी कविता के माध्यम से प्रो. शर्मा के व्यक्तित्व को निरूपित किया है। डॉ. अरविंद कुमार सिंह ने 'यूँ ही नहीं कोई उत्तर और दक्षिण का संबंध सेतु बन जाता है' नामक लेख में प्रो. शर्मा के व्यक्तित्व को चित्रित करते हुए लिखा है, 'मल्टी डाइमेंशनल प्रतिभा और विराट मेधा बहुत कम लोगों में होती है। आप उन्हें जिस भी एंगल से देखेंगे कवि, आलोचक, गद्यकार, मीडिया लेखक या एकेडेमियन वैसे ही दिखने लगेंगे।' (पृष्ठ-८)। उन्होंने प्रो. शर्मा के तेवरीकार रूप को उद्‌घाटित करते हुए उनके बहुआयामी व्यक्तित्व को चित्रित किया है। डॉ. अरविंद कुमार सिंह ने प्रो. शर्मा को स्वयं के लिए दक्षिण का प्रवेश द्वार कहा है; डॉ अश्विनी कुमार शुक्ल प्रो. ऋषभदेव शर्मा के जन्मोत्सव के अवसर पर प्रकाशित 'धूप के अक्षर' अभिनंदन ग्रंथ की 'प्रेम पगे -धूप के अक्षर' में विवेचना करते हुए कहते हैं, 'धूप के अक्षर सुनहरे/ न कभी पल भर को ठहरे/ राज इनके बहुत गहरे/ दे रहे संसृति पर पहरे।' (पृष्ठ-१०)। उन्होंने प्रो. शर्मा के साथ व्यतीत किए आत्मीय क्षणों को साझा किया है। प्रथम पंडित अपने दादाजी प्रो. ऋषभदेव शर्मा को एक दिलचस्प व्यक्तित्व का धनी मानते हैं। प्रसिद्ध गजलकार संतोष रजा गाजीपुरी प्रो. शर्मा के बारे में कुछ भी बोलना सूरज को दीया दिखाने के समान मानते हैं। हैदराबाद केंद्रीय विश्वविद्यालय के प्रोफेसर आलोक पांडे ने 'शर्मा जी, मेरे वाले' लेख में कहा है कि 'कितना सारा कुछ उन्होंने लिखा और संपादित भी किया है। और अच्छा लिखा है। नई बातें कही हैं। नए विषयों पर लिखा है। सिनेमा पर चकित करने वाला लेख तो मेरी ही किताब के लिए लिखा है।' (पृष्ठ-१५)। उनके ऊर्जावान, प्रखर व्यक्तित्व की प्रशंसा में प्रो. आलोक पांडे पूर्णतः निमग्न हो जाते हैं। डॉ. सीमा मिश्र ने प्रो. शर्मा को 'जिंदादिल प्रेरक विभूति' कहा है।

भारतीय साहित्य-कला-संस्कृति संस्थान के संस्थापक वरिष्ठ गीतकार इंद्रदेव 'भारती' ने 'डॉ ऋषभ देव शर्मा : जीवन वृत्त' नामक लेख में प्रो. शर्मा के जीवन को संक्षेप में चित्रित किया है। डॉ. संजीव चिलुकमारि ने 'एक आत्मीय मुलाकात' में प्रो. शर्मा को साधु स्वभाव वाला कहा है। हरिद्वार से गुरुकुल ज्वालापुर महाविद्यालय के डॉ. सुशील कुमार त्यागी ने 'हिंदी साहित्य के प्रख्यात विद्वान प्रो. ऋषभदेव शर्मा' लेख में लिखा है कि गद्य-पद्य तथा संपादन कला में प्रो. शर्मा की लेखनी स्वयं में उल्लेखनीय है। हेमा शर्मा ने अपने ननदोई प्रो. शर्मा के लेखन संसार पर अपने आत्मीय उद्‌गार व्यक्त किए हैं। न्यू जर्सी से देवी नागरानी ने प्रो. शर्मा के व्यक्तित्व और कृतित्व पर प्रकाश डाला है। वे कहती हैं, 'प्रो. शर्मा के साहित्य संसार के बिंब देखे जा सकते हैं। उनके ज्ञान-विज्ञान के विभिन्न परिचायक उनके शब्द संसार के अदृश्य में दृश्य स्वरूप मिलेंगे। गद्य-पद्य, शोध क्षेत्र में वे एक अलग पहचान रखते हैं।' (पृष्ठ- १६)। बिजनौर से इ. हेमंत कुमार जी 'अपनी बात' में प्रो. शर्मा की प्रशंसा करते हैं।

वर्धा के महात्मा गांधी अनुवाद विद्यापीठ के पूर्व अधिष्ठाता प्रोफेसर देवराज ने 'प्रो. देवराज की डायरी : खतौली का औचक दौरा' में प्रो. शर्मा के साथ व्यतीत अपने संस्मरणात्मक क्षणों को साझा किया है। डॉ. हेतराम भार्गव ने 'साहित्य नक्षत्र ऋषभदेव शर्मा' कविता में अपने मनोद्‌गार व्यक्त किए हैं। डॉ मंजु शर्मा ने 'सब हो लिए जिनके साथ....' लेख में साहित्य शास्त्र की बारीकियों से लेकर सिलाई मशीन और साइकिल के पुर्जों तक अनेक लौकिक विषयों का साधिकार ज्ञान रखने वाले प्रो. शर्मा के प्रति अपना सम्मान व्यक्त किया है।

खंड-दो 'कागज की लेखी' में इस पत्रिका की संयुक्त संपादक डॉ. गुर्रमकोंडा नीरजा ने 'कविता का पक्ष : मनुष्यता का पक्ष' में कविता के इतिहास, विकास एवं उद्देश्य को प्रो. ऋषभदेव शर्मा एवं उनकी अर्द्धांगिनी डॉ पूर्णिमा शर्मा की दृष्टि से विवेचित किया है। डॉ. सुपर्णा मुखर्जी के 'कविता है सतत कालयात्री' लेख में प्रो. शर्मा की कृति 'हिंदी कविता : अतीत से वर्तमान' की प्रासंगिकता को निरूपित किया गया है। डॉ. अर्पणा दीप्ति का 'कविता के पक्ष में बहस और गवाही' लेख तथा प्रो. गोपाल शर्मा के गहन लेख 'शब्दहीन का बेमिसाल सफर' में उनकी कलम के कमाल को बखूबी सिद्ध किया गया है। डॉ. जयप्रकाश नागला ने 'संपादकीय के सशक्त हस्ताक्षर : ऋषभदेव शर्मा' लेख में लोकतंत्र पर प्रो. शर्मा की बेबाक टिप्पणी को सराहा है। अवधेश कुमार सिन्हा ने 'कोरोना काल का मुकम्मल ऐतिहासिक दस्तावेज' लेख में प्रो. शर्मा के दिन-प्रतिदिन के लेखन-निखार को विवेचित किया है। प्रो. गोपाल शर्मा ने 'चाँदी के वर्क लगा आँवले का मुरब्बा' तथा 'लोकतंत्र के घाट पर नेताओं की भीड़' में, डॉ चंदन कुमारी ने 'जागरूक और बेबाक पत्रकारिता की मिसाल' में तथा डॉ. मिलन बिश्नोई ने 'सवाल और सरोकार में आमजन के प्रश्नोत्तर' लेख में पत्रकार के रूप में ऋषभदेव शर्मा की संवेदनशीलता तथा साफगोई का सटीक

प्रतिपादन किया है। डॉ. रामनिवास साहू का ‘पठनीयता के उच्च्व शिखर’, डॉ सुषमा देवी का ‘विचार और संवाद का सतत प्रवाह’, आचार्य प्रताप का ‘लोकतंत्र की विसंगतियों पर प्रहार’, प्रो. देवराज का ‘कथाकारों की दुनिया में विचरता एक कवि’ और डॉ. सुषमा देवी का श्चुनावी राजनीति पर बेवाक टिप्पणियाँ’ आदि लेख संदर्भोचित एवं सटीक बन पड़े हैं। डॉ. गुर्रमकोंडा नीरजा का ‘समानांतर दुनिया रचते हैं लेखक’, डॉ. सुपर्णा मुखर्जी का ‘सैर कथाकारों की दुनिया की’ डॉ. सुषमा देवी का ‘तेवरीकार की आलोचना दृष्टि : कथाकारों की दुनिया’, डॉ. सुष्मिता घोष का ‘अंतरंग प्रणय दशाओं की समग्र अभिव्यंजना’, द्विवागीश गुडला परमेश्वर का ‘प्रेम बना रहे में प्रेम निरूपण’ जैसे लेख प्रो. शर्मा के लेखन की सूक्ष्मता का परिचय कराते हैं। अतुल कनक के ‘स्त्रीपक्षीय कविताओं का राजस्थानी पाठ’, डॉ बनवारी लाल मीना तथा डॉ. इबरार खान के ‘प्रेम बना रहे में अभिव्यक्त प्रेम’, डॉ. इसपाक अली के ‘दार्शनिकता, लोकग्रंथ और लोकगंध : सूँ साँ माणस गंध’ में कवि ऋषभ की स्त्रीपक्षीय और मानवीय चेतना को उजागर किया गया है। डॉ. सुपर्णा मुखर्जी की समीक्षा ‘प्रेम कविताओं का अनूठा संग्रह है प्रेम बना रहे’ में प्रेम में पूर्णता की कवि दृष्टि को निरूपित किया गया है। डॉ. योगेंद्र नाथ शर्मा ‘अरुण’ ने शहिंदी महत्ता और इयत्ता की पहचान’ प्रो. शर्मा के रूप में कराई है। डॉ. रामनिवास साहू का ‘धूप के अक्षर’ बोले तो????’, डॉ चंदन कुमारी का ‘तुलसी, राम और रामायण का नाता’, डॉ. सुपर्णा मुखर्जी का ‘कोमलता के परे माणस गंध’, डॉ. संगीता शर्मा का ‘पीड़ा, आक्रोश और उनके पार’ तथा डॉ. गोपाल शर्मा का ‘गुड़ की भेली-सा इकसार स्वाद’ में प्रो. ऋषभ की विश्व दृष्टि से परिचित कराया गया है। कहा जा सकता है कि इस खंड में उनकी सभी प्रमुख पुस्तकों की परीक्षा और विवेचना सम्मिलित है।

खंड-तीन ‘गहरे पानी पैठ’ में प्रो. गोपाल शर्मा ने अपने विस्तृत और गवेषणापूर्ण आलेख ‘जैसे कि बीते दिनों का कबीर वापस आ गया हो’ में कवि ऋषभ की कविताओं को सशक्त, गुंजायमान तथा मनोरंजक कहा है। डॉ. अनीता शुक्ल के ‘रिचर्ड्स के मूल्य सिद्धांत की तुला पर ‘देहरी’ (स्त्रीपक्षीय कविताएँ) का आकलन’ में उनके सामाजिक, साहित्यिक तथा मानवीय सरोकार को बताया गया है। रश्मि अग्रवाल के लेख में प्रो. ऋषभदेव शर्मा एक वृद्धावस्था-विमर्शक के रूप में दिखाई देते है। डॉ.योगेंद्रनाथ मिश्र के ‘फर्क तो पड़ता है जी नाम से भी’ में उनकी अभिव्यंजना की गहराई और कथन की वक्र भंगिमा का गहन विवेचन निहित है। डॉ अंजु बंसल के ‘हिंदी साहित्य के तिलक’, हुडगे नीरज के ‘वैश्विक आतंकवाद पर कलम की चोट’, पुनीत गोयल के ‘आपसे मिलती है हमें प्रेरणा’, डॉ. चंदन कुमारी के ‘एक स्तंभकार का सामयिक चिंतन’, मीनू कौशिक ‘तेजस्विनी’ के ‘दीवाना हुआ ऋषभ’, डॉ. सुपर्णा मुखर्जी के ‘प्रेम और मुठभेड़’ तथा डॉ. चंदन कुमारी के ‘अखंडता, प्रेम और आक्रोश के कवि ऋषभ’ नामक लेखों में प्रो. शर्मा की प्रेम के प्रति समर्पित एवं उदार दृष्टि से लेकर समसामयिक प्रश्नों पर बेबाक राय का गहन विश्लेषण किया गया है। डॉ. महानंदा बी. पाटिल के ‘ऋषभदेव शर्मा की कविता में स्त्री विमर्श’, प्रवीण प्रणव के ‘शिल्प की सीमा से बाहर लिखना कठिन होता है’, डॉ. अरविंद कुमार सिंह के ‘धूप के अक्षर- समीक्षा के बहाने’ आदि में भी बहुमुखी प्रतिभा के धनी प्रो. शर्मा के लेखन की परिपूर्ण मीमांसा की गई है।

खंड-४ : ‘चकमक में आग’ में डॉ. गुर्रमकोंडा नीरजा ने अत्यंत परिश्रम और धैर्य से ‘ऋषभदेव शर्मा विचार कोश’ प्रस्तुत किया है। इसमें अंग्रेजी-हिंदी-मिथ, अनुवाद-भाषा के दो रूप, अस्मितावादी विमर्श, आक्रोश-अगीत, आधुनिकता बोध, उत्तर आधुनिक भाषा संकट, उपभोक्तावाद : बाजार की संस्कृति, कविता-प्रेम बनाम बाजार, कविता-राजनीति, राष्ट्रीयता, लोक संपृक्ति : रिश्ते-नाते, व्यक्ति बनाम समाज, समकालीन लोक संपृक्ति, काव्य प्रयोजन-जन जागरण, काव्य प्रयोजन-शिवेतरक्षतये, काव्य प्रयोजन-साहित्य का उद्देश्य, चेतना-राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय, जनसंचार-भाषा रूप का सामर्थ्य, जिजीविषा, ज्ञान-विज्ञान की भाषा, पत्रकारिता की भाषा आदि विभिन्न विषयों पर प्रो. शर्मा के १०८ चिंतनपरक उद्धरण संदर्भ सहित संकलित किए हैं, जो सामान्य पाठकों से लेकर शोधार्थियों तक के लिए बेहद उपयोगी हैं।

खंड-५ : ‘कबहूँ न जाइ खुमार’ नामक भाग में अमन कुमार त्यागी ने प्रो. ऋषभदेव शर्मा के समग्र काव्य से चुनी हुई ५३ कविताएँ और ३२ मुक्तक संग्रहित किए हैं।

‘शोधादर्श’ के इस विशेषांक के अंत में प्रो. ऋषभदेव शर्मा के सूक्त वाक्य पर आधारित कविता ‘प्रेम बना रहे’ भी संकलित है। कुल मिलाकर यह विशेषांक प्रो. ऋषभदेव शर्मा के बहुआयामी साहित्यिक रूप से पाठकों को परिचित कराने में पूर्णतया सफल है।

-डॉ सुषमा देवी,
असिस्टेंट प्रोफेसर(हिंदी), भाषा विभाग,
भवंस विवेकानंद कॉलेज, सैनिकपुरी-५०००६४.
मो. ९९६३५ ९०९३८.

लघुकथा

चौदहवाँ रत्न

-ऋषभदेव शर्मा

बात लोकतंत्र युग की है।

सत्ता पक्ष और विपक्ष में प्रायः युद्ध चलता रहता था। एक बार दोनों को सूझा कि अपनी शक्ति का इस प्रकार अपव्यय न करके समुद्र मंथन का महत् कार्य किया जाए। बस फिर क्या था, दोनों पक्ष जुट गए - रत्नों का मोह जो था। एक के बाद एक रत्न निकलते चले गए। दोनों पक्षों ने एक एक कर बाँट लिए। तेरहवें नंबर पर कालकूट विष निकला। उसे कौन बाँटता? शंकर जी से प्रार्थना की गई तो उन्होंने साफ मना कर दिया क्योंकि पहली बार पिए विष का प्रभाव अब तक न गया था उनके कंठ से।

अंत में लोकतंत्र की दुहाई दी गई और तेहरवा रत्न दोनों पक्षों की पूर्ण सहमति से जनता को समर्पित कर दिया गया।

समुद्र मंथन चलता रहा। अचानक भीषण गर्जना के साथ चौदहवाँ रत्न प्रकट होने लगा। दोनों पक्ष हर्ष से चीख उठे - ‘‘अमृत’’! लेकिन सभी ने चौंक कर देखा अमृत नहीं निकाला था ‘कुर्सी’ प्रकट हुई थी।

फिर क्या था? दोनों पक्षों ने मंथन छोड़ दिया और कुर्सी को जा पकड़ा। जिसके हाथ में जो भी हिस्सा आया वह जकड़े रहा।

दोनों पक्ष कुर्सी के दांवेदार थे। खींचतान चलती रही। तभी काँधे पर झोला लटकाए नेता-वेशधारी भगवान विष्णु प्रकट हुए। दोनों पक्षों ने अपनी दलीलें पेश कीं। भगवान विष्णु ने झोले से कुछ कागज निकाले और एक पक्ष के हवाले कर दिये। ये ‘अखबार’ थे। फिर झोले में हाथ डाला और एक मोटी सी पुस्तक निकाल कर दूसरे पक्ष के हवाले कर दी। उसके ऊपर सुनहरे अक्षरों में लिखा था- ‘संविधान’।

सुना जाता है, उसी दिन से दोनों पक्ष अखबार और संविधान पढ़-पढ़ कर लड़ रहे हैं। नेता-वेशधारी भगवान विष्णु शेष शय्या छोड़कर आनंद से कुर्सी पर सोए हुए हैं।

लोग कहते हैं, युग बदल रहा है। ० (१.१२.१९८१)

वरदान

- ऋषभदेव शर्मा

आदमी ने कहा, ‘हे भगवान! यह अव्यवस्था कब तक चलेगी? इसे कैसे जीतूँ?’

और भगवान ने उसे कुर्सी दे दी।

आदमी ने कहा, ‘हे भगवान! यह भ्रष्टाचार कब तक चलेगा? इसे कैसे छिपाऊँ?’

और भगवान ने उसे टोपी दे दी।

अब आदमी मजे में है! ० (३०.७.१९८२)

आँखिन की देखी

डॉ. सुपर्णा मुखर्जी

शोधआदर्श मतलब 'शोधादर्श' पत्रिका ने दिसम्बर २०२२-फरवरी २०२३ अंक के अंतर्गत प्रोफेसर ऋषभ देव शर्मा विशेषांक 'प्रेम बना रहे' के नाम से प्रकाशित किया। ५ खण्डों में विभाजित प्रस्तुत पत्रिका को लेखकों ने विभिन्न आलेखों, संस्मरणों, विश्लेषणात्मक भाषा चिंतन संबंधित 'चकमकी आग' से सजाया संवारा है। किसी भी खंड को उत्कृष्ट से कम नहीं कहा जा सकता है और हरेक खंड को पढ़कर समझ आता है कि विद्वानों और विदुषियों ने केवल लिख देने के लिए कुछ भी नहीं प्रत्येक लेख के पीछे लेखकों का एक व्यक्ति विशेष यानि प्रोफेसर ऋषभ देव शर्मा को लेकर किया गया ईमानदार भावनात्मक अनुसंधान को साफ तौर पर देखा, समझा जा सकता है। नोयडा की हेमा शर्मा जी ने कितनी सहज तरीके से लिखा है 'मुझे आज भी याद है, और यह सोचकर मैं आज भी रोमांचित होती हूँ कि एक बार बातों-बातों में मेरी मुस्कान पर कई दोहे रच कर सुनाये थे'।(पृष्ठ-१८, शोधादर्श) अपने प्रोफेसर शर्मा इनके 'ननदोई' लगते हैं। ससुराल में एक बहू को ऐसा 'ननदोई' मिल जाए जो 'अत्यंत विनम्र, जमीन से जुड़े, बौद्धिक और हास-परिहास प्रिय'।(पृष्ठ-१८, शोधादर्श)। तो, एक बहू को भी ससुराल को अपना लेने का बल मिल जाता है। तो यह व्यक्ति केवल सामाजिक स्तर पर स्त्री विमर्श पर बड़ी बातें नहीं कहता है परिवार के साथ उस स्त्री विमर्श को साधारण तरीके से जोड़ भी देता है।

सही बात है, व्यक्ति के सामने उसकी प्रशंसा करना शिष्टाचार का सूचक है लेकिन उसकी अनुपस्थिति में उसकी प्रशंसा में या फिर उसे बार-बार याद करके उसके सान्निध्य को प्राप्त करने की इच्छा को व्यक्त करना केवल शिष्टाचार का अंग नहीं होता बल्कि यही असली 'प्रेम' कहलाता है। ऐसा प्रेम पानेवाला और ऐसा प्रेम देनेवाला दोनों ही धन्य होता है। जैसा कि प्रो. आलोक पांडे जी ने लिखा है,' मैं यह सब सूत्रवत कह रहा हूँ, पर मेरी हर बात के पीछे एक कहानी है, उनसे जुड़ा अनुभव है। और मेरी हर कही बात का मतलब है। ये तारीफ के लिए की जाने वाली तारीफ नहीं है, जैसा कि ऐसे मौकों पर अक्सर देखा जाता है'। (पृष्ठ-१५, शोधादर्श) पर, ऐसा प्रेम मांगने या छीनने से नहीं मिल सकता है। मन, वचन और कर्म से 'प्रसन्नवदनं धाय्येत सर्वविघ्नोपशांतये' (पृष्ठ-५, शोधादर्श)। स्वयं को परिश्रमपूर्वक बनाना पड़ता है। यह काम शर्मा जी कई दशकों से कर रहे हैं। अगर उत्तर को हिंदी का मायका और दक्षिण को ससुराल मान लिया जाए तो अपने प्रोफेसर शर्मा इस मायका और ससुराल के बीच के 'संबंध सेतु' के रूप में बेटी और बहू रूपी हिंदी की सेवा निस्वार्थ भाव से कर रहे हैं। डॉ. अरविन्द कुमार सिंह सम्पादक शार्प रिपोर्टर जी का यह लिखना कि, 'हिंदी पट्टी में रहकर हिंदी की सेवा करना एक पुनीत और महान कार्य है लेकिन गैर हिंदी भाषी क्षेत्र में रहकर पूरा जीवन ही हिंदी को समर्पित कर देना महानतम और श्रेष्ठ सेवा है, जिसे गुरुदेव बखूबी निभा रहे हैं'। (पृष्ठ-६, शोधादर्श)। बढ़े-बूढ़े, हमउम्र, बुद्धिजीवी वर्ग बहुत बार अहेतुक भी प्रशंसा करते हैं उनको शायद अनदेखा भी किया जा सकता है। लेकिन, पोता प्रथम पंडित यह कहे कि, ''दादा जी' शब्द सुन कर सब सोचते हैं कि एक बुजुर्ग आदमी जो थोड़ा पुरानी सोच का होगा, परन्तु यह सत्य नहीं। वे तो अनुभव के साथ ही मस्ती के भी असीम भंडार हैं'।(पृष्ठ-१४, शोधादर्श) तब तो, यह मानना पड़ेगा कि प्रोफेसर शर्मा केवल एक व्यक्तित्व नहीं बल्कि कालजयी व्यक्तित्व हैं जो generation gap की समस्या को चुटकी में सुलझा सकते हैं। ऐसा व्यक्ति केवल मनुष्य का दोस्त नहीं होता वह प्रकृति का भी पुजारी होता है। प्रोफेसर शर्मा द्वारा लिखित कविता 'नीम' उनके प्रकृति प्रेम का उत्कृष्ट उदाहरण है -

'पिता,
जब से तुम गए हो
बहुत याद आता है
गाँव वाले अपने घर का
वह नीम,
जो बिना बोए ही
उग आया था आँगन में
कभी तुम्हारे बचपन में
और तुम्हारे साथ-साथ जवान हुआ था।
बाबा ने एक दिन

पंजी. संख्या UPHIN/2018/77444 ISSN 2582-1288
₹ 200 वर्ष : 5 अंक : 1 दिसंबर 2022-फरवरी, 2023
शोधादर्श
संदर्भित एवं समीक्षित शोध आलेखों की त्रैमासिक पत्रिका
गुरु गोबिन्द सिंह
प्रो. ऋषभदेव शर्मा
विशेषांक
प्रेम बना रहे

बताया था मुझे
श्यह नीम तेरे पिता की उमर का हैश।
उस दिन से
बड़ा प्यार मिलने लगा
मुझे
उस नीम से'।

प्रस्तुत पंक्तियों ने डॉ. अश्विनी कुमार शुक्ल, सम्पादक नूतनवाग्धारा तथा अध्यक्ष हिंदी विभाग व शोधकेंद्र पं. जवाहरलाल नेहरू महाविद्यालय बाँदा, उत्तर प्रदेश एवं प्रोफेसर शर्मा की मित्रता की नींव को 'नीम की निम्बोली' के खट्टे मीठे स्वाद के समान ही अनुपम बना दिया है। प्रोफेसर आलोक पांडे जी ने शर्मा जी के व्यक्तित्व की अदा एक पंक्ति में यह लिखकर बयां कर दिया है कि, 'जो भी प्यार से मिला हम उसी के हो लिए'। (पृष्ठ-१५, शोधादर्श)। संस्कृत में एक सुभाषित है -

'विद्या विवादाय, धनं मदाय,
शक्ति परेषाम् परिपीड़नाय।
खालस्य साधोर्विपरीतमेतत् ज्ञानाय,
दानाय च रक्षणाय।।

अर्थात, विद्या, धन और बल साधु स्वभाववालों के पास रहे तो विद्या ज्ञान दान के लिए, धन दान करने के लिए और बल रक्षा के लिए उपयोग होते हैं। डॉ. संजीव चिलुकमारि जी ने प्रोफेसर शर्मा को इन तीनों शक्तियों का सदुपयोग करनेवाले व्यक्ति के रूप में जाना पहचाना है। १७ दिसम्बर,२०२२ प्रोफेसर शर्मा और डॉ. पूर्णिमा शर्मा कड़पा यात्रा के लिए निकले थे। डॉ. चिलकुमारी और प्रोफेसर शर्मा ने मिलकर इस यात्रा के दौरान न केवल मित्रता का संबंध बनाया था बल्कि आध्यात्मिक चिंतन का विकास काल भी यह यात्रा काल रहा।

भ्रमण प्रेमी डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह जी के अनुभव पर बात करना आवश्यक हो जाता है क्योंकि वे वाकई हैदराबाद अपने किसी व्यक्तिगत काम से आए थे और यूँ ही घूमते-घूमते ये दक्षिण भारत हिंदी प्रचार

सभा, खैरताबाद केंद्र आए और पहली बार प्रोफेसर शर्मा से मिले तो रिश्ता फिर जीवन भर का बन गया और उन्होंने अनुभव किया कि, 'कवि, भाषाविद, आलोचक, व्यंग्यकर, स्तम्भकार आदि कई रूपों में अपना लोहा मनवा चुके ऋषभदेव शर्मा जी जहां अपनी लेखनी के माध्यम से गंभीर चिंतनशीलता का परिचय देते हैं वहीं व्यक्ति के रूप में सदा प्रसन्नचित्त रहते हुए अपनी विनोदी टिप्पणियों के माध्यम से अपने इर्द-गिर्द हलका-फुलका वातावरण बनाए रखते हैं। सम्भवतः उनका विनोदी मन ही आंतरिक तौर पर गंभीर चिंतनप्रद साहित्य के सृजन की अंतःप्रेरणा है। (पृष्ठ-३, शोधादर्श)। जी हाँ, उनकी अंतःप्रेरणा ही उनकी सृजनात्मकता को नित्यप्रति नवीन कल्पना से सराबोर करती है और तब जाकर 'धूप के अक्षर' खिलते हैं। बतौर डॉ. सीमा मिश्रा 'जिन्दादिल प्रेरक विभूति' को डॉ. मंजु शर्मा ने इन शब्दों के द्वारा शब्दचित्र में ढाला है, 'सर के पास कोई भी आता है, तो उनका ही हो जाता है। ये उस बागवान की तरह हैं जो खुरपी-हँसिया से क्यारियों को सहेजता है, निराई-गुड़ाई कर फूलों को खिलने के लिए तैयार करता है। बस शर्मा सर भी हूबहू ऐसे ही हैं'। (पृष्ठ-२४, शोधादर्श)।

तेवरी के प्रवर्तक प्रोफेसर शर्मा जब लिखते हैं, 'शक्ति का अवतार हैं ये रोटियां,
शिव स्वयं साकार है ये रोटियां,
भूख में होता भजन, यारों नहीं,
भक्ति का आधार हैं रोटियां।।

तब देवी नागरानी जी ब्रिटनी सर्कल से उनके लिए लिखती हैं कि, 'हर आदम इस संसार में गुरु भी है और शिष्य भी। कभी सीखता भी है, कभी सिखाता भी है। उसी गुरु-शिष्य परम्परा के खूंटे में बंधे अनेक शिष्यों की तरह मैंने भी ऋषभ देव जी से बहुत सीखा है, इसमें कोई अतिश्योक्ति नहीं'। (पृष्ठ-१६, शोधादर्श)

यह सीखने-सिखाने का कार्य लगातार चलता रहे जैसा कि इंद्रदेव भारती जी ने लिखा है, 'शताधिक पुस्तकों की भूमिका लेखन, शोधपरक समीक्षाएं, शोध पत्रों का प्रकाशन, अनेक राष्ट्रीय-अंतराष्ट्रीय संगोष्ठीयों का संयोजन, अध्यक्षता, मुख्य आतिथ्य, विशिष्ट वक्ता, विषय विशेषज्ञ आदि साहित्यिक सेवाओं की उपलब्धियां आपकी झोली को भरती जा रही है।'(पृष्ठ-१६, शोधादर्श)।

हाँ, इनकी झोली भर तो रही है और साथ में इनके साथ जो लोग चल रहे हैं वे भी गुरु-शिष्य परम्परा का श्कमल ककड़ी' की स्वादिष्ट व्यंजन की तरह चख रहे हैं। तन, मन और मस्तिष्क को सौन्दर्यवान बना रहे हैं। गजलकार संतोष 'रजा' गाजीपुरी आज हमारे बीच नहीं हैं, लेकिन उनकी लिखी गजल प्रोफेसर शर्मा को जानने-समझने वालों के हृदय की बात बन गई है-

'ये रब की मेहर है, कि हमें आप मिले हैं
जीवन के सहर है, कि हमें आप मिले हैं
तारीफ के लिए है नहीं शब्द क्या लिखूँ
खुशियों की लहर है कि हमें आप मिले हैं
....
हम जैसे हजारों की दुआओं का ऐ 'रजा'
प्यारा सा समर है, कि हमें आप मिले हैं (पृष्ठ-१५, शोधादर्श)

- डॉ. सुपर्णा मुखर्जी
हिंदी प्राध्यापिका
भवन्स विवेकानंद कॉलेज, सैनिकपुरी, हैदराबाद।
मो. ६६०३२२४००७

अनुवाद का अनुवर्ती मूल!

डॉ. गुर्रमकोंडा नीरजा

मेरे सामने दो किताबें हैं - २०२१ में छपी 'In Other Words' और २०२३ में छपी 'इक्यावन कविताएँ'। पहली किताब दूसरी का अनुवाद है। लेकिन पुस्तक के रूप में दूसरी बाद में प्रकाशित हुई है। दरअसल 'In Other Words' में कवि ऋषभदेव शर्मा की इक्यावन कविताओं का अंग्रेजी अनुवाद शामिल है। संपादक और अनुवादक हैं गोपाल शर्मा। इन कविताओं के मूल पाठ से बनी दूसरी किताब के भी संपादक और प्रस्तावना लेखक वही हैं। उनका दावा है कि ये कविताएँ उन्होंने अंग्रेजी कविता-संस्कार वाले पाठकों के मिजाज को ध्यान में रखकर डॉ. ऋषभदेव शर्मा के ७ हिंदी कविता संकलनों में से अपनी रुचि के अनुसार चुनी हैं। मेरा भी मानना है कि विषयवस्तु और काव्यभाषा दोनों की दृष्टि से ये कविताएँ ऋषभदेव शर्मा की अन्य कविताओं से कुछ भिन्न या विशिष्ट अवश्य हैं। संग्रह की पहली कविता 'कुत्ता गति', जिसका अनुवादक ने 'A few lines of Doggerel' शीर्षक से अनुवाद किया है, इस लिहाज से बिल्कुल सही उदाहरण है - 'मुझे तैरना नहीं आता/ पानी भरता चला जाता है/ मेरे मुँह में/ नाक, कान, आँख में/ मेरे भीतर भौंकने लगते हैं/ हजारों कुत्ते एक साथ।/ यही कुत्ता गति होनी थी मेरी/ तो मुझे मानुष-देहक्यों दी थी भला?'

इस संग्रह में कवि की अति चर्चित कविता 'औरतें औरतें नहीं हैं' भी शामिल है, जिसमें कवि ने बहुत गुस्से के साथ कहा है- 'जानते हैं वे/ देश नहीं जीते जाते जीत कर भी/ जब तक स्वाभिमान बचा रहे/ इसीलिए/ औरतों के जननांग पर/ फहरा दो विजय की पताका/ देश हार जाएगा/ आप से आप।' इसी क्रम में 'अश्लील है पौरुष तुम्हारा' भी उल्लेखनीय है। कवि के अनुसार- 'अश्लील है तुम्हारी यह दुनिया/ इसमें प्यार वर्जित है/ और सपने निषिद्ध/ धर्म अश्लील हैं/ घणा सिखाते हैं/ पवित्रता अश्लील है/ हिंसा सिखाती है!'

लंबी कविता 'कापालिक बंधु के प्रति' अपने कथात्मक विस्तार, वैचारिक तनाव, विशिष्ट प्रतीक विधान और मिथकीय बिंब गठन के कारण खास तौर पर ध्यान खींचती है- 'तभी निकल कर आया/ पुरानी बोतलों का वह काला जादूगर/ जिसके 'गिली गिली फू' कहकर/ फूँक मारते ही/ खंडित हो जाता है इंद्रधनुष।/ टूट गया इंद्रधनुष/ फैल गया इंद्रजाल।/ अब बादलों की जगह/ तुम्हारे पैरों तले कठोर धरती थी/ मीठे झोंकों की जगह/ यथार्थ की भीषण लू थी/ महमहाती बगिया की जगह/ अगिया बेताल का नाच था।/ .. गर्म लाल जीभ लपलपाती/ गोरी चमड़ी और नीले खून वाली/ मादकता की इन विषकन्याओं के/ जहरीले आलिंगन/ और मरणांतक अधर दंश के साथ/ आरंभ हुई तुम्हारी यह कापालिक घोर अघोर साधना!'

इन कविताओं की काव्य भाषा इस लिहाज से भी विशिष्ट है कि इनमें एक तरफ तो प्रेत, पिशाच, राक्षस, नर पिशाच, कापालिक और दानव शामिल हैं तथा दूसरी ओर कंगारू, छिपकली, चींटी, मकड़ी, कौआ तथा चमगादड़ भी उपस्थित हैं। इन सबके माध्यम से कवि ने समकालीन जीवन की जटिल सच्चाइयों को सहज रूप में व्यंजित किया है। इन कविताओं में निश्चय ही वैश्विक अपील है जिसे सर्वथा निजी काव्यभाषा के सहारे कवि ने खास तराश दी है। प्रवीण प्रणव के शब्दों में मैं भी यही कहना चाहूँगी कि

-'खास तौर पर एक ऐसे वक्त में जब कविताओं के विषय सिमटते जा रहे हैं और भाषा में एकरूपता आती जा रही है, इन कविताओं को पढ़ना एक सुखद अहसास है।'

- डॉ. गुर्रमकोंडा नीरजा
सह-आचार्य,
उच्च शिक्षा और शोध संस्थान,
दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा,
चेन्नै- ६०००१७

शीला बालाजी
डॉ. बी. बालाजी

कागद की लेखी का आँखों देखा हाल

पंजी. संख्या UPHIN/2018/77444 ISSN 2582-1288
₹ 200 वर्ष : 5 अंक : 1 दिसंबर,2022-फरवरी, 2023
शोधादर्श
संदर्भित एवं समीक्षित शोध आलेखों की त्रैमासिक पत्रिका
गुरु गोबिन्द सिंह
प्रो. ऋषभदेव शर्मा
विशेषांक
प्रेम बना रहे

शोधादर्श, नाम से ही विदित हो रहा है कि यह त्रैमासिक पत्रिका शोध के लिए समर्पित है। शोध का आदर्श प्रस्तुत करने के लिए प्रयासरत है। इस पत्रिका के पाँचवें वर्ष का पहला अंक हम हैदराबादियों के लिए विशेष बन गया है। कारण यह है कि उत्तर प्रदेश नजीबाबाद से प्रकाशित हो रही इस त्रैमासिक पत्रिका के माध्यम से उत्तर प्रदेश के खतौली कसबे में जन्मे-पले-बढ़े हुए डॉ. ऋषभदेव शर्मा की कर्मभूमि हैदराबाद में किए गए लेखकीय कर्म के साथ-साथ उनके व्यक्तित्व को साहित्य प्रेमियों के समक्ष शब्दों में अभिव्यक्त करने का एक अद्भुत कार्य संपन्न होना। इस विशेषांक का शीर्षक है - प्रेम बना रहे। इसमें प्रकाशित सामग्री विषय के आधार पर पाँच खंडों में विभक्त है -आखिन की देखी, कागज की लेखी, गहरे पानी पैठ, चकमक में आग और कबहूँ न जाइ खुमार। ये पाँचों शीर्षक कबीर के दोहों के अंश हैं। यहाँ पर खंड दो -'कागज की लेखी' पर चर्चा की जा रही है। इस खंड में ३० लेख संकलित हैं। अध्ययन की सुविधा के लिए डॉ. ऋषभदेव शर्मा के रचना संसार के वैविद्य के आधार पर इन लेखों को छह भागों में रखा गया है - कवि, आलोचक, भाषा चिंतक, समाज व संस्कृति चिंतक, संपादक व पत्रकार तथा प्रेरक शोध निदेशक।

(१) डॉ. ऋषभदेव शर्मा कवि के रूप में

डॉ. ऋषभदेव शर्मा मूलतः कवि हैं। इनका कवि रूप वैसे उनके गद्य लेखन में भी दिखाई देता है। डॉ. शर्मा की प्रेम विषयक कविताओं का संकलन है -'प्रेम बना रहे' (२०१२)। यह कवि ऋषभदेव शर्मा का पाँचवाँ काव्य संकलन है। इस पर शोधादर्श के इस खंड में चार समीक्षकों ने अपने विचार प्रकट किए है। डॉ. सुष्मिता घोष अपने शोधपरक आलेख 'अंतरंग प्रणय-दशाओं की समग्र अभिव्यंजना' में कहती हैं कि 'प्रेम बना रहे' अनेक कारणों से प्रशंसनीय है। "इस काव्यकृति में केवल प्रेम का चित्रण ही नहीं है बल्कि इसमें मन के भाव-अनुभावों, तर्क-वितर्क, धारणा-अवधारणाओं का भी चित्रण है।" डॉ. घोष ने इस कृति में स्त्री के प्रति कवि की अभिव्यंजित भावनाओं पर प्रकाश डालते हुए उद्घाटित किया है कि "पुरुषप्रधान समाज में जहाँ स्त्री व स्त्री की भावना पुरुषों की जागीर है, वहाँ इस कवि ने स्त्री की भावनाओं को उचित मान दिया है।" 'प्रेम बना रहे' को हिंदी काव्य जगत को एक सुंदर उपहार बताते हुए काव्य सौंदर्य के उपदानों को रेखांकित किया है। वे कहती हैं कि यह कृति "विषय के अनुसार भाव, भाषा, विचार, उपमेय, उपमान और लयात्मकता की दृष्टि एक श्रेष्ठ कृति है।" (पृ.सं. ५२-५३)

द्विवागीश गुड्ला परमेश्वर ने में 'प्रेम बना रहे' काव्य संकलन को कवि ऋषभदेव शर्मा द्वारा अपनी धर्म पत्नी पूर्णिमा शर्मा को विवाह की अठ्ठाईसवीं वर्षगाँठ पर समर्पित किए जाने पर टिप्पणी की है कि "२८ वर्षों के सुखद जीवन की स्मृतियों को संजो कर एक ग्रंथ का रूप देकर अपने जीवन काल की अनुभूतियों को बूंद बूंद समेट कर प्रेम का सागर बना कर उसे एक नाम दिया -'प्रेम बना रहे'।" काव्य संकलन को प्रेम बना रहे शीर्षक देने की कवि की मनशा को अपने ढंग से विश्लेषित किया है -"'प्रेम बना रहे'- क्यों कहा गया? शायद कहीं न कहीं मन के किसी कोने में प्रेम के टूटने का डर निवास कर रहा हो! इसलिए यह कामना की गई है कि प्रेम प्रवाह में कोई बाधा ना आए।" परमेश्वर ने इस कृति को एक अद्भुत और चर्चित रचना कहा है। आगे उसे परिभाषित किया है कि "आपकी काव्यशैली के कारण और प्रेम को केंद्र में रखे जाने के कारण यह एक अद्भुत रचना है, तो प्रेम वैविध्य तथा प्रणय की विविध दशाओं को दर्शाने वाली कविताओं के कारण चर्चित है।" (पृ. ५४)।

डॉ. इबरार खान और डॉ. बनवारी लाल मीना ने उक्त संग्रह में अभिव्यक्त प्रेम पर विचार व्यक्त करते हुए यह प्रतिपादित किया है कि "पूरा कविता संग्रह प्रेममय है।" "कवि ऋषभदेव शर्मा ने अपनी रचनाओं में प्रेम को बनाए रखने पर बल दिया है।" संकलन की कविताएँ "प्रेम के किसी न किसी रूप या अनुभूति से संबंधित हैं।" दोनों समीक्षकों ने कामना की है कि "कवि शतायु हों, उनके लिए यही कहना है- जीवेत शरदः शतम।" (पृ. ५७-५६) डॉ. सुपर्णा मुखर्जी के अनुसार यह वस्तुतः प्रेम को प्रकृति से जोड़नेवाली कविताओं का अनूठा संग्रह है। (पृ. ६०)

डॉ. इसपाक अली ने डॉ. ऋषभदेव शर्मा के काव्य संग्रह 'सूँ साँ माणस गंध' के बहाने डॉ. शर्मा की कविताओं की कविताओं की विशेषता पर प्रकाश डाला है। उनका मत है कि "प्रो. शर्मा की कविताओं में जो दार्शनिकता और रहस्यवाद है, वह प्रकृतिवाद को बड़ी गहराई से स्पर्श करता हुआ पाठक को झकझोरता है।" उनके अनुसार कवि ने अपनी सहज भाषा बानी द्वारा इस संग्रह में जीवन के विवध आयामों को प्रभावी रचनात्मकता प्रदान की है। उन्होंने प्रतिपादित किया है कि कवि ऋषभदेव शर्मा द्वारा कविताओं में प्रयुक्त "पाहुणे, बुक्कल, गलगोड्डा जैसे क्षेत्रीय शब्द अचेतन मन के साहचर्य से जुड़ी लोकगंध" की सुमतियाँ उजागर करती हैं। (पृ. ६०) डॉ. सुपर्णा मुखर्जी बताती हैं कि "कवि ऋषभदेव शर्मा एक समय में गुप्तचर अधिकारी थे। वर्तमान समय में शिक्षाविद हैं। वे देशभक्ति तथा मानव मूल्यों की गहरी समझ रखते हैं। अपने अतीत और वर्तमान दोनों ही समय में वे सीधे तौर पर मानव मन की अति सूक्ष्म भावनाओं को छूते-परखते रहे हैं। उनके इसी सूक्ष्म पर्यवेक्षण-परीक्षण का ही परिणाम है 'सूँ साँ माणस गंध'।" डॉ. सुपर्णा ने अपने आलेख 'कोमलता से परे माणस गंध' में रेखांकित किया है कि "यह कविता संग्रह समाधानरहित मनुष्य के आत्मसंघर्ष, आत्मकुंठा, धार्मिक व्यभिचार, राजनैतिक कपट आदि की पोल खोलनेवाला दस्तावेज है।" (पृ. ६४)

डॉ. संगीता शर्मा ने डॉ. ऋषभदेव शर्मा के काव्य संग्रह 'ताकि सनद रहे' पर विचार व्यक्त करते हुए कहा है कि "सदा जीव उच्च विचार की उक्ति प्रो. शर्मा पर सटीक बैठती है।" उन्होंने कवि शर्मा का संक्षेप में रेखाचित्र उतारते हुए देश और समाज में

व्याप्त विसंगतियों के प्रति उनके भीतर की पीड़ा पर प्रकाश डालने का सार्थक प्रयास किया है। वे कहती हैं कि ''सौम्य चेहरा, भावुक प्रकृति, निश्छल प्रवृत्ति वाला चुंबकीय व्यक्तित्व, ऐसे लोग विरले ही होते हैं। कहते हैं शांत समुद्र से उसकी गहराई का पता नहीं चलता, वैसे ही ऋषभदेव शर्मा को देखकर कोई नहीं जान सकता कि उनके भीतर देश और समाज में व्याप्त विसंगतियों के प्रति कितनी पीड़ा और कितना आक्रोश भरा है। लेकिन उनकी रचनाएँ, खात तौर से 'ताकि सनद रहे' (२००२) पढ़कर उनके भीतर की इस आग को महसूत किया जा सकता है।'' उनका मत है कि कवि ऋषभदेव शर्मा की ''रचनाएँ युद्ध, हिंसा, राजनीति की निरंकुशता, पाखंड, दुराचार, अनाचार, शोषण, दमन और उन्माद के प्रति असंतोष, पीड़ा और आक्रोश तक ही सीमित नहीं है, बल्कि वे एक आशावादी कवि के रूप में भी प्रभावित करते हैं।'' (पृ. ६५-६६)

कवि ऋषभदेव शर्मा की स्त्री विषयक कविताओं के संग्रह देहरी का इसी शीर्षक से राजस्थानी भाषा में डॉ. मंजु शर्मा ने अनुवाद किया है। इस संग्रह पर राजस्थानी साहित्य अकादमी से पुरस्कृत वरिष्ठ साहित्यकार अतुल कनक ने ऋषभदेव शर्मा को ''१९८० के दशक में लोकप्रिय हुए तेवरी काव्यांदोलन के सूत्रधार'' के रूप में संबोधित किया है और इस तथ्य को स्वीकारोक्ति दी है कि ''मूलतः उत्तरप्रदेश के खतौली शहर के रहने वाले ऋषभदेव शर्मा वर्षों से दक्षिण भारत में हिंदी का प्रचार-प्रसार कर रहे हैं।'' अतुल कनक ने देहरी पर विचार व्यक्त करते हुए स्मरण कराया है कि देहरी के पहले से ही कवि ऋषभदेव शर्मा की कविताओं में (तेवरियों) में स्त्री जीवन की पीड़ाएँ मुखरित हुई हैं। यहाँ यह कहना समीचीन होगा कि अतुल कनक ने अपनी मायड़ भाषा (मातृभाषा) में देहरी की कविताओं का अनुवाद करने के लिए डॉ. मंजु शर्मा की सराहना की है। (पृ. ५६)

(२) डॉ. ऋषभदेव शर्मा आलोचक के रूप में

डॉ. ऋषभदेव शर्मा कीकाव्य और कथा साहित्य पर केंद्रित आलोचना की पुस्तकें - 'कविता के पक्ष में' (२०१६), 'हिंदी कविता : अतीत से वर्तमान' (२०२१) और 'कथाकारों की दुनिया'(२०१७) पर शोधादर्श में समीक्षाएं प्रकाशित हुई हैं। 'कविता के पक्ष में' पर दो, 'हिंदी कविता - अतीत से वर्तमान' पर एक और 'कथाकारों की दुनिया' पर चार समीक्षात्मक लेख हैं। 'कविता के पक्ष में' पुस्तक की सहलेखिका है डॉ. पूर्णिमा शर्मा। आप डॉ. ऋषभदेव शर्मा की धर्म पत्नी है। वे कवयत्री और समालोच भी हैं। डॉ. जी. नीरजा ने अपने लेख 'कविता का पक्ष : मनुष्यता का पक्ष' में बताया है कि इस समीक्ष कृति का केंद्रीय विचार यह है कि ''हिंदी कविता ने कभी अपने चरम लक्ष्य अर्थात मनुष्य को दृष्टि से ओझल नहीं होने दिया, उसकी कालजयी प्रासंगिकता में यही सबसे बड़ा तर्क है।'' लेखकद्वय ने दस खंडों में विभाजित इस पुस्तक में आदिकाल के नाथ-सिद्ध साहित्य से लेकर उत्तराधुनिक काल के कवि निर्मला पुतुल की रचनाओं को अध्ययन व आलोचना के लिए आधार बनाया है। डॉ. जी. नीरजा ने स्पष्ट किया है कि ''यह पुस्तक इस तथ्य को भली प्रकार स्थापित करती है कि तमाम तरह की मृत्यु घोषणा के बावजूद आज भी कविता मनुष्यता की मातृभाषा है और उसके सौंदर्यबोध को परिष्कृत तथा मनोवत्तियों को उदात्त बनाने का सामर्थ्य रखती है।'' उन्होंने लेखकद्वय की इतिहासदृष्टि, समीक्षादृष्टि, लेखन की शैली व भाषा पर समग्र रूप से प्रकाश डालते हुए यह उद्घाटित करने का प्रयास किया है कि इस पुस्तक की समस्त सामग्री पारदर्शी और पठनीय है। लेखकद्वय का ''फोकस सदा पाठ पर रहा है, किसी सिद्धांत, विचारधारा या वाद विशेष पर नहीं'' जिसके कारण पुस्तक में उद्धृत ''कवियों और उनकी कविता संबंधी निष्पत्तियाँ कृति आधारित हैं।'' (पृ. २५-२७)

इसी कृति पर डॉ. अर्पणा दीप्ति ने अपने लेख 'कविता के पक्ष में' बहस और गवाही' में कहा है कि ''वर्तमाम समय में यह प्रश्न बार-बार उठाया जाता है कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी के तेज चाल वाले जमाने में कविता के लिए कहाँ जगह बची है? जीवन इतना अधिक गद्मय हो गया है कि स्वयं कविता में भी गद्य भर गया है। ऐसी स्थिति में कविता रचने, पढ़ने और पढ़ाने की क्या जरूरत है इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए डॉ. ऋषभ देव शर्मा और डॉ पूर्णिमाकी पुस्तक 'कविता के पक्ष में' (२०१६) को पढ़ा जाए तो निराश नहीं होना पड़ेगा।'' डॉ. दीप्ति ने रेखांकित किया है कि ३७६ पृष्ठ और दस खंड़ों की इस पुस्तक में लेखकद्वय ने हिंदी कविता के पक्ष में आदिकाल से लेकर आधुनिककाल तक की गवाही प्रस्तुत की है।

डॉ. सुपर्णा मुखर्जी ने 'कविता है सतत कालयात्री' लेख में डॉ. ऋषभदेव शर्मा द्वारा रचित पुरस्तक 'हिंदी कविता अतीत से वर्तमान' पर अपने विचार व्यक्त किए हैं। उन्होंने लेखक की कविता से संबंधित आलोचना दृष्टि की ओर पाठकों का ध्यान आकृष्ट किया है। डॉ. सुपर्णा का मानना है कि डॉ. ऋषभदेव शर्मा ने आलोच्य कृति में ''समकालीन हिंदी कविता की विकास यात्रा को रेखांकित किया है और साथ ही हिंदी कविता के उत्तर आधुनिक स्वरूप तथा उसमें अवतरित विविध विमर्शों का भी तात्तविक विश्लेषण किया है।'' आठ अध्यायों में विभाजित पुस्तक के पाँचवें अध्याय ने डॉ मुखर्जी को अधिक आकर्षित किया है जिसका शीर्षक है -'आंदोलनों के मंच पर बोलती कविता'। उन्होंने सुझाव दिया है कि कवि बनने के इच्छुक रचनाकारों को यह अध्याय अवश्य पढ़ना चाहिए ताकि रचनाकार अपने समय की कविता की प्रवृत्ति से परिचय प्राप्त करने की शिक्षा ग्रहण कर सके। ऐसा करने से ही रचनाकार अपनी कविता में अपने समय को अंकित कर पाएगा। कवि को युग का बोध होना आवश्यक है। डॉ सुपर्णा मुखर्जी ने डॉ. ऋषभदेव शर्मा की पुस्तक 'हिंदी कविता अतीत से वर्तमान' की विशेषता को उद्घाटित करते हुए कहा है कि - ''लेखक ने इस अध्याय में नवगीत, अगीत, गजल, तेवरी आदि से संबंधित महत्वपूर्ण जानकारियों को प्रस्तुत पुस्तक के केंद्र में रखा है। साथ ही स्त्री विमर्श, दलित विमर्श, के साथ किस प्रकार से समकालीन कविता जुड़कर अपने-आप को विकसित कर रही है, इसका गहन विश्लेषण किया गया है।'' (पृ. २८)

डॉ. सुपर्णा मुखर्जी ने 'सैर 'कथाकारों की दुनिया' की' में ६ खंडों में विभक्त आलोच्य पुस्तक 'कथाकारों की दुनिया' में ऋषभदेव शर्मा की आलोचना दृष्टि का परिचय प्रस्तुत करते हुए रेखांकित किया है कि 'पहले दो खंडों में लेखक ने हिंदी उपन्यासों और उपन्यासकारों की दुनिया की सैर कराई है, तीसरे और चौथे खंड में कहानीकारों और लघुकथाकारों की दुनिया के कोनों-अंतरों से रूबरू करवाया है, पाँचवें खंड में तेलुगु और छठे खंड में तमिल कथाकारों की भोगी व सिरजी दुनिया से परिचय कराया है।' डॉ. सुपर्णा के अनुसार ये दो खंड इस पुस्तक को प्रासंगिकता प्रदान करते हैं, जिसके कारण 'औरों की तुलना में यह पुस्तक खास है।' (पृ. ४५)

डॉ. गुर्मकोंडा नीरजा ने 'समानांतर दुनिया रचते हैं लेखक' में बताया है कि डॉ. ऋषभदेव शर्मा ने अपनी आलोचना की पुस्तक 'कथाकारों की दुनिया' में हिंदी के कथा साहित्य के विशिष्ट हस्ताक्षरों की रचनाओं के साथ ही तेलुगु और तमिल भाषा के चुनिंदा कथाकारों की रचनाओं की भी आलोचना प्रस्तुत की है और राष्ट्रभाषा के माध्यम से इन तीन भाषाओं के मध्य ''सेतु रचना का स्तुत्य कार्य किया है।'' डॉ. नीरजा ने स्पष्ट किया है कि आलोचक ने कथाकारों को प्राप्त दुनिया और उनके द्वारा रचित दुनिया को विश्लेषित करने का चुनौती

से भरा कार्य करने में सफलता प्राप्त की है। (पृ. ४५)

डॉ. सुषमादेवी ने ‘तेवरीकार की आलोचना दृष्टि – ‘कथाकारों की दुनिया’, में आलोचक ऋषभदेव शर्मा की अन्वेषी दृष्टि को अत्यंत पैनी बताया है। उनका मानना है कि ज्यों-ज्यों इस पुस्तक की गहराई में पाठक उतरता जाएगा उसे कथाकारों की अनंत दुनिया से परिचय मिलता जाएगा। लेखक की आलोचना शैली और स्पष्ट व सरल लेखनी पाठक को इस पुस्तक को पढ़ने के लिए विविश कर देती है। (पृ. ४७-५१)

प्रो. देवराज ने आलोचक ऋषभदेव शर्मा के लिए ‘कथाकारों की दुनिया में विचरता एक कवि’ कहा है। ऐसा कहने के पीछे संभवतः कारण यही रहा होगा कि दूसरों की दुनिया में प्रवेश करने और उसका सूक्ष्म पर्यवेक्षण करने की क्षमता कवि हृदयी आलोचक के पास ही होती है। ऋषभदेव शर्मा की आलोचना दृष्टि पर प्रकाश डालते हुए प्रो. देवराज ने कहा है कि कथाकारों की दुनिया में डॉ. शर्मा एक रचनाकार और आलोचक दोनों ही रूपों में उपस्थित हैं। लेखक की दुनिया और लेखक द्वारा निर्मित दुनिया की पड़ताल करना एक चुनौती भरा कार्य है, जिसका निर्वाह आलोचक ऋषभदेव शर्मा ने बड़ी दक्षता के साथ समानांतर रूप से किया है। (पृ. ४४)

(३) ऋषभदेव शर्मा भाषा चिंतक के रूप में

डॉ. योगेंद्र नाथ शर्मा ‘अरुण’ ने कहा है कि उन्होंने डॉ. ऋषभदेव शर्मा द्वारा लिखित ग्रंथ ‘हिंदी भाषा के बढ़ते कदम’ (२०१५) पूरे मनोयोग से पढ़ा है। यह ग्रंथ हिंदी भाषा पर केंद्रित निबंधों का संकलन है। डॉ. अरुण ने इस ग्रंथ के पठन के बाद यह विश्वास व्यक्त किया है कि

“डॉ. ऋषभदेव शर्मा ने अपने इन निबंधों में हिंदी भाषा को लेकर अपना जो सुदीर्घ चिंतन दिया है, वह हिंदी और हिंदी की अस्मिता से जुड़े अनेक प्रश्नों के समाधान तलाशने में जिज्ञासुओं की भरपूर मदद करेगा।” ४३ निबंधों का इस ग्रंथ को भाषा चिंतक डॉ. ऋषभदेव शर्मा ने छह खंड़ों में विभक्त किया है। डॉ. योगेंद्र नाथ शर्मा ‘अरुण’ के अनुसार यह ग्रंथ ऋषभदेव शर्मा के सुदीर्घ अनुभवों और भाषा चिंतन का प्रतिफलन है। डॉ. अरुण ने डॉ. शर्मा का हिंदी भाषा के प्रति समर्पण और साधना का अध्ययन कर यह प्रमाणित किया है कि वे हिंदी भाषा और साहित्य के पूर्णतः मनोयोग से समर्पित अक्षर साधक और विद्वान हैं। (पृ. ६१-६२)

(४) ऋषभदेव शर्मा समाज व संस्कृति चिंतक

डॉ. ऋषभदेव शर्मा हिंदी भाषा चिंतक होने के साथ-साथ रामायण-दर्शन के गहन अध्येता और विद्वान भी हैं। प्रमाणस्वरूप डॉ. शर्मा द्वारा लिखित पुस्तक ‘रामायण संदर्शन’ (२०२२) को देख सकते हैं। इस पुस्तक के संबंध में रामकथा की अनुसंधान कर्ता डॉ. चंदन कुमारी ने कहा है कि “लेखक ने रामायण की अर्द्धालियों को यत्र-तत्र से पुष्प की भाँति चुनकर उसकी अनुपमता को अनुपम रूप से प्रस्तुत करने की कोशिश में यहाँ जो बाँचा, वह रामायण का सार भाग है।”

डॉ. कुमारी ने यह प्रतिपादित किया है कि लेखक ने राम की गाथा के चुनिंदा पलों को बाँचते हुए भारतीय समाज व संस्कृति की उदात्तता की व्याख्या की है। डॉ. चदन कुमारी के अनुसार

डॉ. ऋषभदेव शर्मा ने आलोच्य पुस्तक में समाज की वर्तमान परिस्थितियों व समसामयिक सरोकारों के सापेक्ष रामकथा के प्रसंगों का मनोवैज्ञानिक विवेचन प्रस्तुत किया है। “यह पुस्तक रामकथा के आस्वादन हेतु जितनी उपयोगी हो सकती है, उतनी ही यह शोध और ‘चिंतन के निमित्त भी उपयोगी है।” (पृ. ६३)। डॉ. गोपाल शर्मा ने इस पुस्तक पर विचार व्यक्त करते हुए कहते हैं कि रामायण संदर्शन ‘गुड़ की भेली-सा इकसार स्वाद’ देती है। इस पुस्तक में रामकथा मर्मज्ञ प्रोफेसर ऋषभदेव शर्मा ने चुनिंदा अद्र्धालियों के निहितार्थ को स्पष्ट किया है। गागर में सागर भरते हुए लेखक ने इस संदर्शन के माध्यम से जिज्ञासु पाठकों के लिए तुलसी के वचनों की गहराई तक जाने का अवसर प्रदान किया है। डॉ. गोपाल शर्मा के अनुसार यह पुरस्तक एक ऐसी कुंजी भी है जिससे रामकथा के पाठक को तुलसी की किसी अर्धाली या चौपाई के अभिधार्थ से सहज ही आगे, बहुत आगे जाने की राह दिखाई देगी। (पृ. ६६)

(५) ऋषभदेव शर्मा संपादक व पत्रकार के रूप में

हैदराबाद से प्रकाशित हिंदी दैनिक समाचार पत्र डैली हिंदी मिलाप में डॉ. ऋषभदेव शर्मा द्वारा लिखित संपादकीय के संकलन – संपादकीयम् (२०१८), समकाल से मुठभेड (२०१६), इलेक्शन गाथा (२०२०), सवाल और सरोकार (२०२०), लोकतंत्र के घाट पर (२०२०), कोरोना की डायरी (२०२०) और खींचों न कमानों को (२०२२) के नामों से प्रकाश में आए हैं। इन संलकनों पर शोधादर्श के आलोच्य अंक के खंड-दो कागद की लेखी में १५ समीक्षात्मक आलेख व टिप्पणियाँ दर्ज हैं। ये आलेख व टिप्पणियाँ डॉ. ऋषभदेव शर्मा को एक सजग, सतर्क व संवेदनशील संपादक के रूप में परिभाषित करती हैं।

‘संपादकीय सशक्त हस्ताक्षर : ऋषभदेव शर्मा’ लेख में डॉ. ऋषभदेव शर्मा को अपना पसंदीता संपादक बताते हुए डॉ. जयप्रकाश नागला ने कहा है कि वे डॉ. शर्मा को ऋषभ दा कहना पसंद करेत हैं। वे अपने ऋषभ दा के संपादकीयों पर विचार व्यक्त करते हुए कहते हैं कि “ऋषभ दा एक उम्दा साहित्यकार, संपादक व पत्रकार इसलिए हैं कि वे अपने विषय के साथ न्याय करते नजर आते हैं। वे एक कवि मन के संपादक व पत्रकार हैं। मैंने उनको एक कवि के रूप में बहुत ज्यादा नहीं पढ़ा, लेकिन संपादक, पत्रकार के रूप में उन्हें विगत तीन चार वर्ष से पढ़ रहा हूँ। उनकी कलम का अपना पृथक अंदाज है। विषय वस्तु के साथ कम से कम समय में जुड़कर शब्द-दर-शब्द के साथ न्याय करने का ऐसा हुनर विरले कलमचियों में ही होता है। ऋषभ दा को लेकर इतना कह सकते हैं कि लेखन विधा में निपुण या पारंगत, परिपूर्ण होने के साथ ही कलम की दुनिया के फनकार अवश्य हैं।” (पृ. ३१)

डॉ. मिलन बिश्नोई के अनुसार ‘सवाल और सरोकार’ (२०२२) में डॉ. ऋषभदेव शर्मा ने मूक बधिर बन बैठी जनता के सवाल करने की हिम्मत को शब्दबद्ध किया है। वे कहती हैं कि इन संपादकीयों में “लोकतंत्र की आवाज, राजनीतिक मुठभेड, भ्रष्टाचार, अतिक्रमण, नेताओं की जुबान की फिसलन, शिक्षा, आर्थिक उतार-चढ़ाव, भाषायी विवाद जैसे मुद्दों के प्रश्न दिखाई देते हैं।” उन्होंने उद्घाटित किया है कि “इस वैचारिक कृति के पठन से देश-दुनिया, सामाज-सरकार, लोकतंत्र-लोकसत्ता, जनतंत्र की वास्तविक शक्ति” की सही मायने समझ विकसित की जा सकती है। (पृ. ४०-४२) डॉ. सुषमा ने रेखांकित किया है कि लेखक ने इस कृति में सवालों के सरोकार को कई बार समाधानात्मक मोड भी दिए हैं। (पृ. ४३)

डॉ. रामनिवास साहू का मानना है कि ‘संपादकीयम’ (२०१६) में डॉ. शर्मा ने “अपनी व्यापक सर्वग्राह्य संवेदना से संपूर्ण मानवता के प्रति अपना हृदय स्पंदित किया है तथा अपनी दिव्य दृष्टि से ‘जहाँ न पहुँचे रवि, वहाँ पहुँचे कवि’ की तर्ज पर मानव को आतंकित, पीडित, दलित, कुंठित करने वाली हर घटना का अवलोकन कर साहित्कार की भाषा शैली एवं बिंब से विवेचित किया है। पुस्तक पठनीयता के उच्चतम शिखर पर है।” (पृ. ४२) डॉ गोपाल शर्मा ने इस संकलन के संबंध में यह रेखांकित किया है कि “‘संपादकीयम’ में ‘कोरे कागद’ कारे भर नहीं किए गए हैं, बल्कि एक युगधर्म का पालन भी किया गया है।” (पृ. ३०)

डॉ. चंदन कुमारी ने डॉ. ऋषभदेव शर्मा द्वारा

लिखित संपादकियों के संकलनों का गहन अध्ययन कर यह निष्कर्ष दिया है कि लेखक 'जागरूक और बेबाक पत्रकारिता की मिसाल' हैं। उन्होंने लेखक की 'खींचों न कमानों को' (२०२२), 'लोकतंत्र के घाट पर' (२०२०), और 'संपादकीयम (२०१९) में संकलित संपादकीय टिप्पणियों के आधार पर कहा है कि इनमें लेखक ने अपने समय के व्यापक सरोकारों को अपनी कलम से ऐतिहासिक दस्तावेज बना दिया है। ''नारेबाजी और फतवेबाजी से परे रहकर पाठकों को'' सामयिक विसंगतियों से रू-ब-रू कराकर समझने-सोचने के लिए प्रेरित किया है। (पृ. ३९-३९)

डॉ. गोपाल शर्मा ने 'लोकतंत्र के घाट पर' को पढ़ने की संस्तुति करते हुए कहा है कि ''पान की दुकान से लेकर प्राइम टाइम के दंगल तक जब आपको कोई ठीक-ठिकाने की बात सीधी तरह से न समझा पाए, तो आप इस लोकतंत्र के घाट पर के पाठ द्वारा राहत पा सकते हैं।'' (पृ. ३५) डॉ. सुषमा के अनुसार 'लोकतंत्र के घाट पर' के माध्यम से भारत के विविध रूपधारी प्राणियों की चुनावी प्यास की स्थिति को पाठक अनुभव कर सकते हैं और यदि लोकतंत्र के ऊँट को अपने अनुसार करवट बदलवाना है, तो फिर इसे अवश्य पढ़ना चाहिए। (पृ. ४४) आचार्य प्रताप ने लेखक को हैदराबाद की एक अनोखी कलम के नाम से जाने जाने वाले उत्कृष्टतम व्यक्ति की संज्ञा देते हुए कहा है कि यह कृति लोकतंत्र की विसंगतियों पर प्रहार करने वाली धार वाली रचना है। (पृ. ४३) अवधेश कुमार सिन्हा के अनुसार डॉ. ऋषभदेव शर्मा द्वारा रचित 'कोरोना काल की डायरी' एक 'मुकम्मल ऐतिहासिक दस्तावेज' है। ऐसा कहने के कारण को स्पष्ट करते हुए उन्होंने कहा है कि ''यह संकलन न सिर्फ समसामयिक खबरों पर दैनंदिन अखबारी टिप्पणियाँ है, जो मार्च २०२० से नवंबर २०२० के काल-खंड में कोविड-१९ से उपजी तमाम परिस्थितियों का समाजशास्त्र, राजनीति, शिक्षा व्यवस्था, कानून व्यवस्था, अंतरराष्ट्रीय संबंधों एवं कूटनीति जैसे अनेक आयामों पर शोध का उपादान प्रस्तुत करता है।'' (पृ. ३४) इस संकलन में संकलित संपादकीयों के संबंध में डॉ. गोपाल शर्मा का कहना है कि अब जब आप इन्हें पढ़ेंगे तो मेरी तरह यह भी देख लेंगे कि इस डायरी में काल अवश्य कोरोना से ग्रस्त है, किंतु क्रम और कर्म नहीं। यह अबाध गति से नदी के समान प्रवाहमान है।'' (पृ. ३५)

डॉ. गोपाल शर्मा ने प्रतिपादित किया है कि डॉ. ऋषभदेव शर्मा द्वारा लिखे गए ''संपादकीय हिंदी पत्रकारिता के क्षेत्र में पदार्पण करने के इच्छुक और अनुभवी दोनों प्रकार के पत्रकारों के लिए समान रूप से पठनीय हैं, क्योंकि इनमें आदर्श संपादकीय के सभी गुण हैं। विषय-चयन और शीर्षक के चुनाव से लेकर वर्णन की सहज शैली से होते हुए उनके समापन संदर्भ तक लेखनी का गतिशील रहना पाठक को अनायास ही बाँधता चला जाता है।'' (पृ. ३०)

(६) ऋषभदेव शर्मा प्रेरक शोध निदेशक के रूप में

निष्कर्ष से पहले, आपको स्मरण ही होगा कि अभी कुछ समय पूर्व डॉ. ऋषभदेव शर्मा के व्यक्तित्व और कृतित्व को समर्पित अभिनंदन ग्रंथ - धूप के अक्षर १ व २ (२०२२) प्रकाश में आया था। इस ग्रंथ पर संक्षिप्त टिप्पणी 'धूप के अक्षर बोले तो ???' में डॉ. रामनिवास साहू ने कहा है कि डॉ. ऋषभदेव शर्मा सहृदयी और संवेदनशील हैं। इन्ही गुणों के कारण उनमें हिंदी सेवा की व्याकुलता है और इसीलिए दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा को अपनी तपोभूमि बनाई। उन्होंने बताया है कि डॉ. शर्मा प्रेरक शोध निदेशक हैं। ''उन्होंने अनेक शोध कराए, जिससे महाविद्यालयीय प्रवक्ताओं की पंक्तियाँ कन्याकुमारी तक लग गयीं। साथ ही संपादन, लेखन, संचालन, टिप्पण, संगोष्ठी, शिविर आदि सहगामी कार्यों में भी वे सक्रिय रहे व पकड़ बनाए रहे।'' (पृ. ६२)

निष्कर्ष यह है कि डॉ. ऋषभदेव शर्मा के साहित्य पर केंद्रित शोधादर्श के विशेषांक 'प्रेम बना रहे' के दूसरे खंड 'कागद की लेखी' में डॉ. शर्मा द्वारा रचित कविता, आलोचना, संपादकीय की पुस्तकों का देश के अलग-अलग प्रांतों के विदुषियों और विद्वानों ने काफी मनोयोग से अध्ययन किया और उसके बाद अपने विचारों को समीक्षा के रूप में अंकित किया है। यह भी विशेष रूप से कहा जाना चाहिए कि प्रेम बना रहे, यह वाक्यांश डॉ. ऋषभदेव शर्मा के सभी परिचितों के लिए एक मुहावरा बन गया है। डॉ. शर्मा अपने लेखों, समीक्षाओं आदि को विषय के आधार पर जिस तरह विभाजित करते हैं और उन्हें उपयुक्त-आकर्षक शीर्षक प्रदान करते हैं, वैसा कम ही देखने को मिलता है। इन शीर्षकों को केंद्र में रखकर भी शोध किया जा सकता है। अंततः डॉ. शर्मा को एक वैज्ञानिक साहित्यकार कहा जाए तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होनी चाहिए। अस्तु।

लघुकथा

असली हामिद

-ऋषभदेव शर्मा

इक्कीसवीं सदी।

आज ईद है। ईदगाह पर भारी भीड़ है। पिछली शताब्दी के महान कथाकार प्रेमचंद मेले में अपने कथानायक बालक हामिद को खोजते फिर रहे हैं। हिंडोले के पास देखा, खिलौनों की दुकान पर देखा, मिठाइयों की दुकान पर देखा, कहीं कोई हामिद नहीं दिखा।

हार झख मारकर कथाकार लोहे की चीजों की दुकान पर भी पहुँचे। और यह क्या, यहाँ तो बच्चों की कतार लगी है! इनमें हामिद को ढूँढ़े भी तो कैसे? वे एक बच्चे का नाम पूछते हैं और सब बच्चे अभी अभी खरीदे हुए चिमटों पर हाथ फेरते हुए कहते हैं - 'मैं हामिद हूँ।'

प्रेमचंद भौंचक।

'तुम सब हामिद कैसे हो सकते हो - असली हामिद कौन सा है?'

'हम सब असली हामिद हैं।' उन्होंने बन्दूक की तरह चिमटे कंधों पर रख लिए है।

प्रेमचंद को लगता है, अब किसी अमीना की अंगुलियां नहीं जलेंगी। ० (१.१२.१९८१)

शरण

-ऋषभदेव शर्मा

रामकली २१ वर्ष की आयु में विधवा हो गई थी। उसका पति एक सड़क दुर्घटना में मर गया था, दो बच्चे छोड़ कर। लोगों के बर्तन माँज माँज कर और बच्चे खिला खिला कर वह अपने बच्चे पाल रही थी। गंगा सिंह मोहल्ले का दादा था और नेता भी। उसने रामकली को कई बार छेड़ा। पर रामकली ने हाथ न धरने दिया। एक शाम गंगासिंह दरोगा जी को लेकर आ गया। दोनों नशे में धुत्त।

रामकली ने पड़ोसी अचपल के घर में शरण ली। पीछे से वे दोनों भी आ गएय और चार सिपाही भी। अचपल और उसके परिवार वालों को पीटा गया। सबको घसीट कर थाने ले जाया गया।

गंगासिंह, दरोगा जी और सिपाही एक ही 'तश्तरी' में खाते-पीते रहे। रामकली शरण माँगती रही। परशरणदाता अचपल और उसके लड़कों को तो बलात्कार के आरोप में हवालात में बंद कर दिया गया था! ० (२.१२.१९८१)

बाना कलमकार का हो !

प्रो. गोपाल शर्मा

(त्रैमासिक पत्रिका 'शोधादर्श' के 'प्रो. ऋषभदेव शर्मा विशेषांक' पर आयोजित विचार-गोष्ठी में दिया गया अध्यक्षीय भाषण। दिनांक : २ अप्रैल, २०२३, स्थान : दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, हैदराबाद।)

स्वच्छंदतावादी मान्यता के ठीक विपरीत टी एस इलियट का विचार था कि कविता में न तो भावनाओं की अभिव्यक्ति को प्रमुखता दी जाती है और न कवि के व्यक्तित्व प्रदर्शन को। कवि को तो अपने व्यक्तित्व से पलायन की ही पड़ी रहती है। इसको यदि उन्हीं के शब्दों में जानें तो कहना होगा कि "निर्वैयक्तिकता की प्रक्रिया में कला को विज्ञान की स्थिति में पहुँचना होता है। मैं आपको एक समानता बताता हूँ, यह वैसे ही होता है जैसे किसी चौम्बर में ऑक्सीजन और सल्फर डाइआक्साइड हो और उसमें प्लेटिनम डाल दिया जाए। इस प्रक्रिया में प्लेटिनम की भूमिका संयोजक की तो होती है किन्तु प्लेटिनम स्वतः प्रकट नहीं रहता। 'The mind of the poet is the shred of platinum- It may partly or eÛclusively operate upon the eÛperience of the man himself; however] the more perfect the artist] the more completely separate in him will be the man who suffers and the mind which creates; the more perfectly will the mind digest and transmute the passions which are its material.'

इलियट के इस तर्क को यदि आज हम सौ वर्षों के बाद भी सुनते समझते हैं तो इसी कारण से क्योंकि जब भी किसी कवि या रचनाकार की रचना की समीक्षा और परीक्षा हो तो उसमें समालोचक भी उसी प्रकार से निर्लिप्त रहे। मेरा व्यक्तिगत संबंध तब आड़े न आए जब मैं कवि ऋषभ की कविता की पड़ताल करूँ। मैं उन बातों और स्तुति-गान से भी अप्रभावित रहूँ जो मैंने इस संगोष्ठी के अध्यक्ष के नाते सुनीं। मैं अपनी कहूँगा। मैं तो यह समझ कर आगे कुछ कहना चाहूँगा कि ये जो सारा उपक्रम हुआ जिसमें 'शोधादर्श' के प्रो डॉ ऋषभ देव शर्मा पर केंद्रित इस विशेषांक तक हम लोग आ गए, यह वास्तव में कवि के खतौली से दक्षिण भारत में आकर बस जाने की उसी परंपरा का अंग है जिसके एक छोर पर यदि महर्षि अगस्त्य हैं तो दूसरे पर कवि मनीषी ऋषभ।

कई विद्वान वक्ताओं ने आज भी अनेक विशेषणों से कवि ऋषभ की कविता को उनके मन में पैठने का द्वार कहा। कई ने उसमें इनकी आत्मा का वास भी माना। अब एक ही रचनाकार आत्मा भी हो जाए और दरवाजा भी हो जाए, बड़ा ही मुश्किल काम है कि दरवाजे में पहले जाएँ कि आत्मा में जाएँ!

मैं उन सबको छोड़कर, वह सारी बातें जो प्रशंसा में कह दी गई हैं, उनको न कहकर अपनी बात कहना चाहूँगा और वह बात यह है कि इसका कारण क्या है कि यह सब हुआ? दो खंडों में प्रस्तुत 'धूप के अक्षर' नामक ग्रंथ के अनेकानेक लेखकों के श्रम से यह बात तो रेखांकित हो ही जाती है कि जिसे आप तेवरी काव्य आंदोलन कह रहे हैं और इसके प्रभाव से कवि ऋषभ ने 'तरकश' से लेकर जो अनेक कविता संग्रहों की रचना करके अपने काव्य-तेवर को चिंतन के केंद्र में लाकर अपना स्थान बनाया है वह साधारण बात नहीं है।

'धूप के अक्षर' की तरह ही 'शोधादर्श' के इस विशेषांक ने यह भी बता दिया है कि ऋषभ केवल कवि नहीं हैं। इनके लेखन के तेवर और भी हैं। यदि कवि की एक कसौटी गद्य भी कही जाती है तो उस निकष पर भी यह टंच माल दिखता है। जो दिखता ही नहीं छपकर नित्य प्रति बिकता भी है। 'मिलाप' अखबार में नित्य संपादकीय को पढ़कर कोई 'आई ए एस' बन जाए सहज संभाव्य है। हिंदी के बढ़ते कदमों की पद-चाप को ऋषभ का राजभाषा-विवेक जिस खूबी से पकड़कर व्याख्यायित करता है, वह शोध का अलग विषय बनकर विश्वविद्यालयों में शोधोपाधि प्राप्त करने में लगे अनेक छात्र बखूबी जानते हैं।

पंजी. संख्या UPHIN/2018/77444
ISSN 2582-1288
₹ 200
वर्ष : 5 अंक : 1 दिसंबर,2022-फरवरी, 2023
शोधादर्श
संदर्भित एवं समीक्षित शोध आलेखों की त्रैमासिक पत्रिका
गुरु गोबिन्द सिंह
प्रो. ऋषभदेव शर्मा
विशेषांक
प्रेम बना रहे

हाँ, कवि-साहित्यकार-लेखक को इसका कुछ भान न था कि इनके ऊपर इस तरह से पुस्तकें या शोधग्रंथ लिखे जाएँगे या कोई इन पर व्याख्यान देगा। जिस समय अमुक कविता लिखी जा रही थी उस समय तो कवि ने यह नहीं सोचा था कि इसके ऊपर भावार्थ और शब्दार्थ और व्याख्या लिखी जाएगी। अनुवादक गण इनके काव्य संग्रहों के अनुवाद देशी विदेशी भाषाओं में करने की तत्परता दिखाएंगे। एक ही पुस्तक के एक ही भाषा में दो दो अनुवाद जब हो जाएं तो यह देखना जरूरी होगा कि 'प्रेम बना रहे' की कविताओं में क्या बात है। और यदि कुछ बात है तो कवि के प्रति प्रेम बना रहे, यह तो छोटी सी बात है।

ये जो सारा कार्य हुआ और हम यहाँ 'शोधादर्श' तक आए, वह इसलिए आए क्योंकि आप और हम इनके अनेक पाठकों में से एक हैं। पाठकों को भी इसका कुछ न कुछ श्रेय मिलना ही चाहिए। पाठकों की सराहना से ही किसी साहित्यकार को श्रेय मिलता है। पाश्चात्य जगत में देरिदा और फूको जैसे उत्तर संरचनावादी कहते हैं कि रचनाकार रचना के जन्म के उपरांत ही मृत हो जाता है। वह अपनी रचना के साथ पुनर्जन्म के समान बार बार सम्मुख प्रकट होता है। हमारे यहाँ भी तो वर्षों पहले कह दिया गया था -

जयन्ति ते सुकृतिनो रससिद्धाः कवीश्वराः।
नास्ति येषां यशः काये जरामरणजं भयम् ।।

अब आप लोगों ने जिन्होंने भी जो कुछ लिखा है, "क्या उन्होंने लेखक को सामने रखकर लिखा है या उसकी कृति को सामने रखा है?" जिस समय लेखक अपने घर-परिवार के बीच आराम कर रहे थे, अपने परिवार के साथ फिल्म देख रहे थे, उस समय आप और हम उनकी कृति को पढ़कर शोध-पत्र और आलेख तैयार कर रहे थे। उस समय लेखक को ज्ञान भी नहीं था कि कौन बैठा हुआ दूसरे शहर में कुछ लिख रहा था। कवि ने तो उस कविता को १०-१५-२० साल पहले लिखा था

और आपने उस २० साल पुरानी कविता को निकालकर उसके मर्म को पहचानकर उस कविता पर अपने विचार व्यक्त किये। बस कवि की कृति ही तो आपसे मुखातिब थी। इसी को हम-लोग 'अस्ति' कहते हैं, और वे-लोग 'बीइंग'। यही होना है। यही हुआ है।

मैं इस बात को थोड़ा और दूसरे ढंग से कहूँगा। एक शब्द होता है 'परसेप्शन' या अनुभूति। आम-फहम लफ्जों में कहें तो हमें ऐसा लगा कि प्रो डॉ ऋषभ देव शर्मा के विपुल लेखन को समग्रता से देखा जाना चाहिए और इसमें भागीदारी भी समग्र रूप से हो। एक तरह का 'पॉट-लक' हो। 'धूप के अक्षर' में भी वह है और 'शोधादर्श' के इस अंक में भी। इस आयोजन का लाभ यह रहा कि जिस रचनाकार के रचना कर्म के साहचर्य के हम आदी होने की खुशफहमी पाले हुए थे, उसके रचना कर्म के गहन पाठ से जब अर्थ की पर्त-दर-पर्त खुलने लगीं तो हमें अपने बहुपठ होने के घमंड को दरकिनार करना पड़ा। अनत सुख पाने के लिए पुनि पुनि जहाज पर आने की लालसा हुई। यह कविता के साथ ही कवि की भी जय रही।

'शोधादर्श' का यह विशेषांक इतना विशेष और विलक्षण है कि आज अन्य वक्ताओं के व्याख्यान और परिचय मात्र को सुनकर मुझे डर लगने लगा कि मैं इस पत्रिका पर और कुछ बोलूँ या नहीं। मैं इसका पात्र हूँ भी या नहीं। इसके बारे में मुझसे बोलने के लिए कहा जाएगा तो क्या बोला जाना चाहिए? नदी किनारे बैठने वाला मैं, डूबने से डरने वाला मैं, उतरने से डरने वाला मैं, जब एक बार पत्रिका के अंक में अवगाहन करने की हिम्मत जुटा कर प्रवेश कर गया तो डॉ ऋषभ पर लिखने वालों की विद्वत्ता, सहजता और गहनता का बोध हुआ। गहरे पानी में पैठकर इन लोगों ने जो मौक्तिक ढूंढें हैं, उनके क्या कहने? संपादक अमन कुमार ने जिन जिन कविताओं का संकलन किया, उनमें से शायद ही कोई कविता मेरे द्वारा संकलित कविता संग्रह में हो? ऐसा क्यों है? ऐसा शायद इसलिए है कि कवि ऋषभ की सब कविताएं अपने अपने तेवर में निराली छवि धारी हैं। किसी को 'बंक बिलोचन' भा जाते हैं तो किसी को 'मकराकृति कुंडल'। क्या इसी को ''पिण्डे पिण्डे मतिर्भिन्ना कुण्डे कुण्डे नवं पयः, जातौ जातौ नवाचाराः नवावाणी मुखे मुखे'' कहते हैं?

ये बातें तो सब पूर्व वक्ताओं के द्वारा बता दी गईं कि एक रचनाकार ने रचना की और उसके बाद दूसरे ने उसको पढ़ा और उस पर शोधालेख लिख दिया और अब आपके शोधालेख को पढ़ने के बाद एक दूसरा व्यक्ति फिर उस पर टिप्पणी करेगा और ये सिलसिला कभी खत्म नहीं होगा तभी तो अगला अंक आएगा। आपने यह कार्यक्रम शुरू किया तो आप सब प्रतिष्ठापक आचार्य हो गए। आपने एक प्रतिष्ठा कर दी। आप यह नहीं लिख रहे हैं कि कवि जिनका जन्म १९५७ में हुआ था उन्होंने १९९१ में यह कविता लिखी। आप तो यह सोच रहे हैं कि यह एक शाश्वत कविता है और आपने अपने प्रकार से उसका अर्थ लिखा।

अब कुछ इस पत्रिका के इस अंक के कुछ आलेखों और उनके लेखकों का जिक्र अपेक्षित है। कोई प्रसन्न मन से लिखना प्रारंभ करता है 'प्रसन्नवदनं. .. 'मैं बार-बार उस श्लोक का स्मरण कर रहा हूँ। प्रो.दिलीप सिंह ने भी इसी तरह से प्रसन्नवदन होकर और कहकर कवि ऋषभ पर दो दशक पूर्व एक लंबा आलेख लिखा था जो उनकी पुस्तक 'कविता पाठ विमर्श' में सम्मिलित भी किया गया था। मुझे नहीं मालूम कि जिसने ये प्रसन्नवदनं टाइटल 'शोधादर्श' में प्रकाशित अपने आलेख में दिया उसने प्रो दिलीप सिंह का उक्त आलेख पढ़ा है या नहीं। नहीं पढ़ा है तो ये बड़ी अच्छी बात है क्योंकि जो बुद्धिमान व्यक्ति होते हैं वे एक सा सोचते हैं।

कुछ दूसरे लेखकों की ओर नजर दौड़ाते हैं। उससे आगे हम चलते हैं तो बहुत सारे लेखक हमारा ध्यान आकृष्ट करते हैं। प्रो आलोक पांडे अपनी तरह कहते हैं 'शर्माजी मेरे वाले'। ये बात मुझे बहुत पसंद आई उनकी यह उक्ति कि सबके अपने-अपने शर्माजी हैं। डॉ. अहिल्या मिश्र जिस 'प्रेम वाले शर्मा जी' के बारे में बार-बार बात करती हैं और उनकी प्रेम-भरी कविताओं की प्रशंसक है वो 'तेवरी वाले' शर्मा जी से भिन्न हैं। आलोक पांडे के शर्मा जी से भिन्न हैं। इस कारण से जो भी लिखने में विविधता आई है, उसके पाठों में भी विविधता आई है वह इसलिए क्योंकि ऋषभ के सुधी -पाठक और सहृदय आलोचक अपने-अपने ढंग से लिख रहे हैं।

शर्माजी की कृतियों को पढ़िए, सभी अलग हैं। इनकी समीक्षा भी एक साथ बैठकर नहीं लिखी गई है। विभिन्न अवस्थाओं में, विभिन्न परिस्थितियों में लिखे गए हैं ये आलेख, इसलिए भिन्न-भिन्न हैं। अब मैं उन सब को पढ़ रहा हूँ तो मैं उन्हें अलग से देख भी रहा हूँ।

मैं 'धूप के अक्षर' नामक दो खंडों के और 'शोधादर्श' के विशेषांक के संपादकों और लेखकों के संदर्भ में बात कर रहा था कि विभिन्न पाठकों और समीक्षकों ने एक साहित्यकार की एक ही रचना को या विभिन्न रचनाओं को विभिन्न दृष्टिकोण से देखा और देखकर उसपर विभिन्न समयों में विभिन्न तरह से अपनी कलम चलाई। इसी कारण से 'धूप के अक्षर' के तो दो खंड ही बनाने पड़े। 'शोधादर्श' भी पुस्तक हो गई होती, यदि अमन कुमार जी ने ऐसा करने की ठान ली होती।

अब हम ऋषभ के साहित्य के लेखकों - उनके रचना संसार पर लिखने वालों- के अवदान और उनके प्रति कृतज्ञता भाव के आपसी संबंध की बात करने की तरफ दौड़ते हैं। ये जो सामूहिक सत्कार की भावना है, जिसमें कवि ऋषभ के साथ साथ उनके रचनात्मक अवदान पर कलम चलाने वालों का भी सम्मान किया गया वह सामूहिक सत्कार उस सामाजिक भावना का है जिसमें एक धुरी पर बैठे आप लोगों ने अपनी-अपनी तरह से कवि के रचना संसार की गणेश परिक्रमा की।

इससे क्या लाभ हुआ? बहुत सारे शिष्य कहेंगे कि हमने अपने गुरुजी को प्रसन्न कर दिया। नहीं, यह अनुष्ठान इसलिए कराया जा रहा है कि आपको साहित्यिक संस्कार से संस्कारित किया जा सके। एक व्यक्तिगत उदाहरण देकर स्पष्ट करता हूँ। मैं उस समय एम.फिल. का छात्र था। उस समय (लगभग वर्ष २०००) एक पुस्तक प्रकाशित हुई 'स्त्री सशक्तीकरण के विविध आयाम'। इस पुस्तक के संपादन के मूल में भी साहित्यिक संस्कार की भावना ही प्रबल थी। इसकी केटलिस्ट 'डॉ. अहिल्या मिश्र' थीं जिनके आत्मीय सहयोग से और जिनके कृतित्व को मद्दे नजर रखते हुए यह ग्रंथ संपादित किया गया था। 'स्त्री' तो केंद्र में थी ही। प्रधान संपादक डॉ ऋषभदेव शर्मा थे। साहित्यिक संस्कार और शोधादर्श की गवेषणा में रत उनके दो शिष्य उस समय उस पुस्तक के सहायक संपादक थे - गोपाल शर्मा और कविता वाचक्नवी। बाद में इन सहायक संपादकों ने जो संस्कार प्राप्त किये उसके बल पर देश-विदेश में प्रतिष्ठा प्राप्त की। इससे इनके अभिव्यक्ति कौशल में निखार आया। इसलिए कहना यह होगा कि जब आप डॉ ऋषभ पर लिख रहे हैं, तो यह आपके लिए एक सुनहरा मौका है कि आप भी लेखन-संस्कार प्राप्त करें। उसमें निखार लाएं।

अब उदाहरण स्वरूप दूसरी बात कहता हूँ। आज से लगभग सौ वर्ष पहले आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी १९३२ में २४ घंटे के लिए काशी पधारे थे। उनके काशी पहुँचने पर उन्हें अभिनंदन-पत्र भेंट किया गया तब आचार्य शिवपूजन सहाय और अन्य प्रतिष्ठित नागरिकों ने यह निश्चय किया कि इनको एक अभिनंदन ग्रंथ भी भेंट किया जाए। जब यह

तय हो गया कि इनको एक अभिनंदन ग्रंथ भेंट किया जाएगा तो अर्थ जुटाने की कवायद शुरू की गई। हनुमानप्रसाद पोद्दार ने इसके लिए पाँच रुपए दिए कि चलिए हम शुरू करते हैं। किसी ने तीन रुपए दिए। उसके बाद यह तय किया गया कि जो जो लोग इस ग्रंथ को पढ़ना चाहेंगे, खरीदना चाहेंगे उनसे पैसे पहले ले लिए जाएँ। बहुत से पाठकों से कहा गया कि आप लोग तीन-तीन रुपए इस ग्रंथ को खरीदने के लिए पहले ही दे दें। सत्रह लोगों ने पैसे दिए भी। इस तरह से उनके पास ५०-६० रुपए इकट्ठे हो गए। जब यह देखा गया कि ५०-६० रुपए इकट्ठे हो गए पर यह धन पर्याप्त नहीं होगा तो वे साहित्यप्रेमी और दानी राजा महाराजाओं के पास गए। किसी ने ५१ रुपए दिए, किसी ने १०० रुपए दिए और इस तरह ३००० रुपए इकट्ठे होने के बाद ग्रंथ छपा। इस ग्रंथ को आप आज मुफ्त में एक क्लिक से पढ़ सकते हैं। इस पुस्तक में प्रकाशित अपने आलेख में प्रेमचंद जी ने जो एक पंक्ति लिखी है, उसे उद्धृत करके अब अपनी बात को मैं वहां से मोड़ देता हूँ।

''हम अपनी रचना को अमूल्य समझें, इसका हमें अधिकार है लेकिन दूसरे तो इसे तभी अमूल्य समझेंगें जब वह अमूल्य होगी।'' ये प्रेमचंद जी कह रहे हैं। यहाँ मैं इसे उद्धृत भर कर रहा हूँ और सीधे कवि ऋषभ और आपकी उपस्थिति में कह रहा हूँ कि आप अपनी रचना को अमूल्य समझें, यह आपका अधिकार है। पर यह अमूल्य तब हुई है जब हम दूसरों ने इसे वैसा कहा है। इस उद्धरण को मैं अविकल रूप से आपको पढ़कर ही सुना देता हूँ।

हमारे दो एक मित्र ऐसे हैं जिन्हें हमेशा यह फिक्र सताया करती है कि लोग उनसे जलते हैं, उनके लेखों की कोई प्रशंसा नहीं करता, उनकी पुस्तकों की बुरी आलोचनाएं ही होती हैं। अवश्य ही कुछ लोगों ने एक गुट बनाकर उनका अनादर करना ही अपना ध्येय बना लिया है। ऐसे आदमी सदैव दूसरों से इस तरह सशंक रहते हैं मानों वे खुफिया पुलिस हों। बस जिसने उनकी प्रशंसा न की उसे अपना दुश्मन समझ लिया। इसका कारण इसके सिवा और क्या है कि वे अपने को उससे कहीं बड़ा आदमी समझते हैं जितने वे हैं। संसार को क्या गरज पड़ी है कि उनके पीछे हाथ धोकर पड़ जाए। हम अपनी रचना को अमूल्य समझें, इसका हमें अधिकार है, लेकिन दूसरे तो उसे तभी अमूल्य समझेंगे जब वह अमूल्य होगी। ('दुखी जीवन', पृष्ठ २४१)

एक होती है ब्याज स्तुति और दूसरी होती है ब्याज-निंदा। जो ब्याज स्तुति करेगा उसके कथन में देखने और सुनने पर निन्दा सी जान पड़ेगी किन्तु वास्तव में प्रशंसा होगी। इसके विपरीत जहाँ कथन में स्तुति का आभास हो किन्तु वास्तव में निन्दा हो, ऐसा भी तो करते ही हैं। पर ये भी 'धूप के अक्षर' और 'शोधादर्श' की बड़ी सफलता है कि कवि कीर्तन के स्थान पर कविता कीर्तन किया गया है। ठीक भी है, इन सभी ग्रंथों का उद्देश्य और लेखकों- संपादकों का इरादा अपने सिर पर बला मोल लेना न था बल्कि ऋषभ देव शर्मा के रचना संसार का एक पक्का और व्यवस्थित ढांचा खड़ा करना था, न कि उनका कीर्तन करना या गुणानुवाद गायन करना। इस ढांचे को अब आप इंटीरियर डेकोरेटर की तरह सजाने सँवारने के लिए स्वतंत्र हैं। इस तरह से कारवाँ बढ़ता चला जाएगा।

अब उन लेखकों की ओर देखें जो अपनी तरह से ऋषभ को देखकर लिख रहे हैं। एक प्रतिष्ठित लेखक लिखते हैं, ''जब मैंने प्रो. शर्मा जी को जानना ही शुरू किया था तब लगता था इनकी कविता की चर्चा होनी चाहिए। कई वर्षों बाद यह हुआ भी। लगा कि इनकी कविताओं पर आलेख लिखे जाने चाहिए और यह भी हुआ। इनके समग्र साहित्य को पढ़कर लगा कि इनके बारे में लोगों को और जानना चाहिए और एक विस्तृत किताब आनी चाहिए और यह भी हुआ।'' ये चार पाँच पंक्तियाँ मैं नहीं कह रहा हूँ। मैं उद्धृत कर रहा हूँ। कितनी बारीकी से प्रवीण प्रणव जी के लेख की दृष्टि इस साहित्यकार के काम पर केंद्रित थी जब वे ये लाइनें लिख रहे थे।

हिंदी में एक कहावत है कि मूल से प्यारा ब्याज होता है। और ये प्रवीण प्रणव हमारा ब्याज हैं। ये एक लेखक का, कवि का, साहित्यकार का ब्याज है। कुछ और किसी और की पंक्तियाँ हैं, ''वैसे ही सक्रिय...सत्य को साहस के साथ कहने वाले व्यावहारिक पर चापलूस नहीं... उत्तम साहित्यिक समझ ... प्रेम और आदर करनेवाले'' - इस तरह के छोटे-छोटे शब्द और पद लिखकर एक लेखक किसी पुस्तक में इस तरह से टाँक देता है क्योंकि उसके मस्तिष्क में छोटे-छोटे चित्र बन रहे हैं और वह जो इस प्रकार से लिख रहा है, ये हमारा ब्याज है। कृतिकार का ब्याज है जो उसे मूल से अधिक प्यारा है। ऐसे ही हेमा शर्मा लिखती हैं। उनकी एक पंक्ति है, ''जितने सहज ये मनुष्य हैं उतने ही सहज कवि भी''। ये जो पंक्तियाँ मैं आपको सुना रहा हूँ वो केवल इन कवि के लिए नहीं है। ये पंक्तियाँ उस रचनाकार के उर्वर मन की उपज भी हैं जिसने इन लाइनों को लिखने के लिए उन्हें प्रेरित किया। वो जो अंदर बैठा हुआ आपको उकसा रहा था जब आप लिख रहे थे। उसका भी तो अमित योगदान है न? आपको जो ये पंक्तियाँ लिखवा रहा था उसको भी धन्यवाद है। आप इस प्रकार से इस कवि के माध्यम से अपने रचनाकार को भी एक अवसर दे रहे हैं कि आप भी अपना एक रचना संसार बनाएं। एक रचना संसार यहाँ बना हुआ है जिस पर लिखा है- ''प्रो. ऋषभदेव शर्मा का रचना संसार''। यदि आप अपना रचना संसार भी बनाते हैं तब आप अपने गुरु के पट्ट शिष्य होंगे।

अब दूसरा उदाहरण लेते हैं। कोई दूसरा लिखता है, ''मोम सा मन किन्तु बन जाता है एकदम पारदर्शी व्यक्तित्व''। छोटे-छोटे शब्दों से एक ही बात में कहनेवाले ऐसे बहुत से है। कवि के एक बड़े अच्छे मित्र हैं। देखिये वे क्या लिखते हैं? ''पढ़ते-पढ़ते लगेगा कि मानक हिंदी के सही ट्रैक पर स्केटिंग करने का काम चल रहा है।'' इस प्रकार के वाक्यों को वह व्यक्ति भी लिख रहा है जिसे हम साहित्यकार से अधिक भाषा-विमर्शकार समझते रहे। ये जिसके ट्रैक पर चलने की बात कर रहे हैं वास्तव में उसको किसी ने ट्रैक पर चलना सिखाया है। वो ये ही वो हैं। इस पहेली को पहेली ही रहने दें और आगे चलें।

एक दूसरी प्रोफेसर हैं जो लिखती हैं, ''ऋषभदेव शर्मा की कविता की स्त्री अब आकाश माँगती है, न्याय माँगती है किंतु मैं एक ऐसा समाज चाहती हूँ जहाँ कि पुरुष को 'परमार्थशील' होने का संस्कार मिले।'' मैंने जिन्दगी में 'परमार्थशील' शब्द पहले कभी नहीं सुना था। कवि ऋषभ पर जम कर लिखने ने डॉ. अनीता शुक्ल को नई भंगिमा अख्तियार करने और नए शब्द गढ़ने का मौका दिया है। अज्ञेय की ''कलगी बाजरे की' की काव्य पंक्तियों को उनसे बेहतर भला कौन पढ़ाता होगा? - कभी बासन अधिक घिसने से मुलम्मा छूट जाता है। और भी - शब्द जादू हैं? मगर क्या समर्पण कुछ नहीं है?

कवि ऋषभ की कविता के प्रति समर्पण भाव ही तो इनसे इतने पृष्ठ लिखवा ले गया। रिचर्ड्स के मूल्य सिद्धांत की तुला पर 'देहरी' को तौलना मुझे क्लासिसिस्ट मैथ्यू अर्नोल्ड का टच स्टोन मेथड याद करा गया और मिल्टन की ये पंक्तियाँ भी जो ये आलोचक बहुधा सुनाया करते थे - 'And courage never to submit or yield;And what is else not to be overcome.'

शेक्सपियर ने कहा था, ''नाम में क्या रखा है?'' लेकिन बार-बार नाम की चर्चा होती ही है। 'ऋषभदेव शर्मा' के नाम पर एक व्याकरण पंडित

ने पूरा एक लेख इस बात पर लिख दिया। डॉ. चंदन कुमारी ने एक छोटी-सी बात लिखकर मन मोह लिया कि ‘जीवन का सार आत्मीयता में ही बसता है।’’ अगर आप यह मान लें कि यह उक्ति इन्ही की है तो आप फिर कहेंगे ये आचार्य रामचंद्र शुक्ल जी की शिष्या कहाँ से पैदा हो गई। अरविंद सिंह जी लिखते हैं, ‘‘यह व्यक्तित्व किसी साँचे में नहीं ढलता है।’’ ऐसी बातें लिखी जाएँगी तो जिसके लिए लिखा जाएगा, वह तो अभिभूत होगा ही, लिखने वाला भी खुद की पीठ थपथपाये बिना न रह सकेगा।

अब एक खूबसूरत मोड़ देने का वक्त आया लग रहा है। इतने ढेर सारे विद्वानों की रचनाओं को पढ़कर उनसे मुखातिब होना टेढ़ी खीर है। यह मुझे पहले ही पता था। मैंने खुद से कहा, ‘‘देखते हैं भाई! कुछ नया करना पड़ेगा?’’

मैंने बड़ा ही आसान सा काम किया। मैंने एक नया प्रयोग उपयोग किया। तीन-चार दिन पहले सना नाम की लड़की से मेरी मुलाकात हुई। मैंने सोचा कि ये पता किया जाना चाहिए कि जिनके बारे में इतनी मोटी-मोटी किताबें लिखी गई हैं उनके बारे में आर्टिफीसियल इंटेलीजेंस से पूछा जाए तो वह क्या बताएगी?

मैंने चैट जी पी टी से बातचीत की।

मैं – ‘‘हैदराबाद के ऋषभदेव शर्मा कौन हैं? मुझे इस प्रोफेसर के बारे में जानकारी दो।’’

चैट – आई एम सॉरी, इस नाम का कोई प्रोफेसर आजकल हैदराबाद में नहीं है या किसी बड़ी पोजीशन पर नहीं है फिर भी यदि आप मुझे अधिक विशिष्ट विवरण प्रदान कर सकें जैसे कि ये प्रोफेसर किस क्षेत्र या विषय में माहिर हैं या किस संस्थान में काम करते हैं तो मैं आपके लिए अधिक जानकारी एकत्रित करने का प्रयास कर सकता हूँ।

मैं- वे द.भा.हि.प्र. सभा में हिंदी के प्रोफेसर रहे हैं।

चैट – ‘‘इस सूचना को उपलब्ध कराने के लिए धन्यवाद। हमारी रिसर्च के अनुसार वे द.भा.हि.प्र. सभा में हिंदी के प्रोफेसर रहे हैं। द.भा.हि.प्र. सभा एक संस्था है। यह दक्षिण भारत में हिंदी के अध्ययन और उपयोग को बढ़ावा देती है। इसकी स्थापना वर्ष १९१८ में हुई थी। यह संस्था पाठ्यक्रम और प्रकाशन कार्यक्रम प्रदान करती है और शोध भी करती है। और हिंदी भाषा साहित्य को बढ़ावा देती है। ऋषभदेव शर्मा कई वर्षों से द.भा.हि.प्र. सभा से जुड़े हैं और हिंदी भाषा और साहित्य के क्षेत्र में शामिल रहे हैं। उन्होंने हिंदी साहित्य के सांस्कृतिक पहलू पर किताबें और शोध लेख भी लिखे हैं। हिंदी के क्षेत्र में उनके योगदान को व्यापक मान्यता मिली है और उन्हें इस क्षेत्र का एक प्रख्यात विद्वान् माना जाता है।

मैं – एक कवि के रूप में उनके योगदान को बताइए।

चैट – मैं पिछली प्रतिक्रिया के लिए क्षमा चाहता हूँ। लेकिन एक कवि के रूप में ऋषभदेव शर्मा के बारे में मुझे अंग्रेजी में कोई जानकारी नहीं है। हालांकि मैं आपको हिंदी भाषा के प्रोफेसर के रूप में उनके अकादमिक और साहित्यिक योगदान के बारे में बता सकता हूँ। ऋषभदेव शर्मा हिंदी भाषा के प्रख्यात विद्वान हैं। और इस क्षेत्र में उन्होंने काफी महत्वपूर्ण योगदान दिया है। उन्होंने कविता, नाटक, आलोचना सहित हिंदी साहित्य के विविध पहलुओं पर कई किताबें और शोध लेख लिखे हैं। विभिन्न साहित्यिक मंचों के माध्यम से हिंदी भाषा और साहित्य को बढ़ावा दे रहे हैं। उन्होंने हिंदी भाषा, साहित्य और संस्कृति पर व्याख्यान और प्रस्तुतियाँ दी।

मैं – मुझे इनकी पुस्तक ‘प्रेम बना रहे’ के बारे में बताएं।

चैट – मैं पिछली प्रतिक्रिया के लिए क्षमा चाहता हूँ, लेकिन मुझे ऋषभदेव शर्मा की पुस्तक ‘प्रेम बना रहे’ के बारे में कोई जानकारी नहीं है। ये संभव है कि ये पुस्तक उनकी प्रकाशित प्रतियों में से एक न हो या यह कथा या कविता संग्रह हो जो व्यापक रूप से उपलब्ध नहीं है।

मैं – क्या आप मुझे गोपाल शर्मा द्वारा अंग्रेजी में अनूदित कवि ऋषभ की पुस्तक ‘इन अदर वर्डस’ के बारे में बता सकते हैं?

चैट- मुझे खुशी है कि मुझे ऋषभदेव शर्मा की पुस्तक के बारे में कुछ जानकारी मिली है जिसका अनुवाद गोपाल शर्मा ने किया है।

आप में से जो इस विशेषांक के लेखक हैं और जिनकी संख्या १०० के आसपास हैं, वे शायद एक दूसरे की रचनाएँ नहीं पढ़ते होंगे। इस विशेषांक को आपने किन पाठकों के लिए लिख छोड़ा है? क्या आपने इसके मुख पृष्ठ पर जिनका फोटो है केवल उनके पढ़ने के लिए लिखा है? आपने तो लिख दिया कि अब तू पढ़, नहीं ये आपके पढ़ने के लिए भी है। और मैं चाहूँगा कि इसका जो अगला अंक निकले उसमें कुछ ऐसी भी बातें हों जिसमें आपने अपनी रचना से दूसरी रचनाओं को तुलनात्मक आधार पर देखा हो। क्यों तुलना करते हैं? आप देखिये कि आपकी रचना में कितना वजन है। तुलना करें और मुक्त कंठ से प्रशंसा भी, यदि बन पड़े। लेखन करते कराते रहें। आपको यदि अवसर मिल गया है तो कम से कम एक दो समीक्षा और लिख दीजिये। ऐसी बात लिख दीजिये कि कवि को उसका वजन पता चल जाए। केवल यही नहीं कि तारीफ कीजिये, कुछ ऐसी बात बताइए जिस पर किसी का ध्यान न गया हो। रचनाकार तो सुधरनेवाला नहीं है। पर समीक्षक को कोताही महँगी पड़ेगी। और यदि आप यूँ ही लिखते चले जाएँगे तो संस्कार, सुधार, परिष्कार और रचना संसार सब कुछ आपका भी होगा। यह तय है।

(मूल व्याख्यान को अविकल रूप से मनोयोगपूर्वक डॉ. चंदन कुमारी ने लिपिबद्ध किया है।)

– प्रो. गोपाल शर्मा
पूर्व प्रोफेसर, भाषाविज्ञान संकाय,
अरबा मींच विश्वविद्यालय, इथियोपिया।

लघुकथा

अलादीन का चिराग

– ऋषभदेव शर्मा

..और अलादीन ने चिराग घिसा। मेघ-गर्जन के साथ ‘जिन’ प्रकट हुआ, ‘मैं हाजिर हूँ, मेरे आका, हुक्म फरमाएँ!’

अलादीन ने तीन बार कहा, ‘राशन.. राशन.. राशन!’

‘जिन’ अंतर्धान हो गया। लंबे समय बाद फिर उपस्थित हुआ।

‘कहाँ है राशन? लाए?’ अलादीन ने पूछा। ‘जिन’ चुप रहा।

‘मैं पूछता हूं, तुम्हारे थोबड़े पर बारह क्यों बजे हैं?’

‘माफ करें, मेरे आका! मैं सब कुछ कर कर सकता हूँ, राशन नहीं ला सकता!’

‘क्यों? क्या कहीं नहीं है?’

‘है! लेकिन गोदामों में। और रोज लद-लर कर परदेस जा रहा है। रूप और रुपये का ऐसा तांत्रिक-पहरा बैठा है कि मेरा प्रवेश नामुमकिन है।’

‘यह पहरा कैसे टूटेगा? मेरी तो आँते बजने लगी हैं!’

‘जिन’ एक घड़ी तक चुपचाप खड़ा रहा।... और फिर अचानक गायब हो गया- हमेशा के लिए। और अगली सुबह..

अलादीन ने चिराग फोड़ दिया था। वह मुट्ठियाँ भींचे सड़क पर आ गया था। ० (७.१२.१९८९)

कबहूँ न जाइ खुमार

प्रो. ऋषभदेव शर्मा

प्रवीण प्रणव

किसी भी विषय में शोध कार्य का बहुत बड़ा महत्व है, यह हमें बार-बार किसी भी बिंदु को नये नजरिए से देखने का आग्रह करती है, और नये रास्ते तलाशने को प्रेरित भी करती है। संपादक अमन कुमार के नेतृत्व में प्रबुद्ध संपादक मंडल की टीम, ‘शोधादर्श’ पत्रिका का संपादन करती रही है और विभिन्न विषयों पर इतनी सारगर्भित सामग्री पाठकों के लिए परोसती रही है, कि इसका हर अंक संग्रहणीय है। पत्रिका का दिसंबर २०२२ - फरवरी २०२३ अंक, प्रो. ऋषभदेव शर्मा के व्यक्तित्व और कृतित्व पर आधारित विशेषांक है। प्रो. ऋषभदेव शर्मा के कृतित्व के बारे में परिचय देते हुए अतिथि संपादक डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह लिखते हैं ‘‘ऋषभदेव शर्मा के काव्य कर्म के संबंध में, मैं इतना ही कहना चाहूँगा कि वे कविता में शब्दों को रमणीय अथवा वाक्यों को रसात्मक बनाने से परहेज करते हुए कविता में गूढ अर्थों की अभिव्यंजना के प्रति सचेत रहते हैं।’’ साथ ही उनके व्यक्तित्व का परिचय देते हुए लिखते हैं ‘‘ऋषभदेव शर्मा जी जहाँ अपनी लेखनी के माध्यम से गंभीर चिंतनशीलता का परिचय देते हैं वहीं व्यक्ति के रूप में सदा प्रसन्नचित्त रहते हुए अपनी विनोदी टिप्पणियों के माध्यम से अपने इर्द-गिर्द सदा हलका-फुलका वातावरण बनाए रखते हैं। संभवतः उनका विनोदी मन ही आंतरिक तौर पर गंभीर चिंतनप्रद साहित्य के सृजन की अतःप्रेरणा है।’’ एक पाठक के लिए इस परिचय को पढ़कर, इस व्यक्तित्व से परिचित होने के मोह से बच पाना मुश्किल है। संपादक अमन कुमार इस परिचय को और सरल, साथ ही और जटिल करते हुए लिखते हैं ‘‘आप सहज हैं, आप सरल हैं, आप ज्ञान के लिए यात्री हैं और ज्ञानार्थी के लिए भंडारग्रह हैं। आप रेखाओं के महत्व में फँसकर बिंदु के महत्व को भूलना नहीं चाहते हैं, आप ऐसी आजादी से त्रस्त हैं, जो रेखा के रूप में, बिंदु को ही नष्ट करने पर तुली हुई है।’’ यह जटिलता ऐसी नहीं है जिससे पाठक घबरा कर लौट जाए, यह एक ऐसे तिलस्म का निर्माण करती है, पाठक जिसके पार जाना चाहता है, और समझना चाहता है उस व्यक्तित्व को जिसे एक संपादक विनोदी तो दूसरा छद्म आजादी से त्रस्त बता रहा है।

पत्रिका में, पाँच खंडों में संपादक मंडल ने बहुत ही रुचिकर तरीके से, इस विशेषांक की सामग्री को वर्गीकृत किया है। इस विशेषांक का पाँचवां और अंतिम खंड है ‘कबहूँ न जाइ खुमार’। इस खंड में संपादक, अमन कुमार ने, प्रो. ऋषभदेव शर्मा की कविताओं में से अपनी पसंद की इक्यावन कविताओं का संकलन किया है। इस खंड के नाम को देखते ही मुझे प्रसिद्ध शायर खुमार बाराबंकवी का शेर याद आया ‘‘अक़्ल ओ दिल अपनी-अपनी कहें जब ‘खुमार’ / अक़्ल की सुनिए दिल का कहा कीजिए।’’ बात तो ठीक है लेकिन ऋषभदेव शर्मा इसके उलट भी करते रहे हैं, जहाँ वह दिल की सुनने लगते हैं और अपने लिए वाजिब मात्रा में समस्याएं एकत्रित कर लेते हैं। गाँव में एक प्रसिद्ध कहावत है - ‘‘लीक-लीक गाड़ी चलै, लीकहि चले कपूत। /यह तीनों उल्टे चलै, शायर, सिंह, सपूत।’’ एक शायर के लिए बे-बहर हो जाना उचित न हो, लेकिन बे-लीक होना अनिवार्य तत्व है, और ऋषभदेव शर्मा इस मामले में सही लीक पर हैं।

जिन इक्यावन कविताओं का अमन कुमार ने इस संकलन के लिए चुनाव किया है, उन्होंने इस चुनाव का कोई कारण नहीं बताया है। किसी समुद्र में यदि कोई गोताखोर मणि-माणिक्यों की खोज में गोता लगाए तो बहुत संभव है कि उसके हाथ कभी पत्थर, कभी सीप तो कभी कोई मणि भी हाथ लग जाए। लेकिन यदि किसी को यह आजादी मिले कि आप किसी हीरे-जवाहरात से भरे खजाने में जाएं और अपनी दोनों मुट्ठियों में जितना ला सकें, उतना ले कर लौट आएं। ऐसी परिस्थिति में हो सकता है कि आपकी मुट्ठी में सबसे बड़ा, या सबसे कीमती हीरा न आया हो, लेकिन इतना तो तय है कि आप जो ले कर लौटे हैं वह है तो मूल्यवान ही। प्रो. ऋषभदेव शर्मा का कवि-कर्म एक ऐसा ही खजाना है और अमन कुमार ने जिन कविताओं को अपने पाठकों के लिए चुना है, वे अपने-आप में न सिर्फ अमूल्य हैं, महत्वपूर्ण हैं, बल्कि प्रो. ऋषभदेव शर्मा के कवि-कर्म को पाठकों तक समग्रता से पहुंचाने में सर्वथा समर्थ भी हैं। और इसी से यह भी ज्ञात होता है कि अमन कुमार द्वारा यह चुनाव एक आकस्मिक चुनाव नहीं बल्कि उनकी दूरदर्शिता का परिणाम है। जिन खोजा तिन पाइया, गहरे पानी पैठ।

यूं तो प्रो. शर्मा के नौ प्रकाशित कविता संग्रह हैं लेकिन इस पत्रिका में ‘प्रेम बना रहे’ (१६ कविताएं), ‘तेवरी’ (१० कविताएं), ‘तरकश’ (१५ कविताएं) और ‘ताकि सनद रहे’ (८ कविताएं) संग्रहों से पचास कविताओं का चयन किया गया है। एक कविता, दशम गुरु श्री गोविंद सिंह को याद करते हुए ‘सूँ साँ मानस गंध’ संग्रह से ली गई है। लेकिन ऐसा नहीं है कि पाठक इन कविताओं को पढ़ते हुए शेष चार कविता संग्रहों से अपरिचित रहेंगे। जैसे बनारस के पंचगंगा घाट के बारे में मान्यता है कि यहाँ गंगा तो प्रत्यक्ष तौर पर दिखती हैं लेकिन अदृश्य रूप से यमुना, सरस्वती, किरण और धूतपापा नदियां गंगा में मिलती हैं। इसी तरह इस पत्रिका में पाँच संग्रहों से जिन कविताओं को चुना गया है, उनमें शेष चार संग्रहों की आत्मा भी बसती है। अमेरिका के प्रसिद्ध कवि ई.ई. कमिंग्स ने कहा ‘प्रेम कविताएँ हृदय का झरोखा, आत्मा का दर्पण और जीवन के अंधकार में आशा की किरण होती हैं।’ पाब्लो नेरूदा ने भी कहा ‘प्रेम कविताएँ हृदय का संगीत, आत्मा की सिम्फनी, और सबसे गहरी मानवीय संवेदनाओं की अभिव्यक्ति होती हैं।’ प्रो. ऋषभदेव शर्मा के संग्रह ‘प्रेम बना रहे’ से ली गई १६ कविताओं को पढ़ते हुए ई.ई. कमिंग्स और पाब्लो नेरूदा के गूढ़ वक्तव्यों का मर्म समझा जा सकता है। प्रेम बना रहे शीर्षक संग्रह में प्रेम विषय पर आधारित कविताएं हैं लेकिन प्रेम का संदर्भ विस्तृत है। इसका दायरा लौकिक से अलौकिक

और आत्मा से परमात्मा तक है। गुलजार ने लिखा ‘प्यार इक बहता दरिया है/ झील नहीं कि जिसको किनारे बाँध के बैठे रहते हैं/ सागर भी नहीं कि जिसका किनारा नहीं होता/ बस दरिया है और बह जाता है./...../प्यार एक जिस्म के साज पर बजती गूँज नहीं है/ न मन्दिर की आरती है न पूजा है/ प्यार नफा है न लालच है/ न कोई लाभ न हानि कोई/ प्यार हेलान हैं न एहसान है./.. ..../हम, तुम तो नहीं/ पर पूछना है, तुम हमसे हो, या हम तुमसे/ प्यार अगर वो बीज है तो/ इक प्रश्न भी है इक उत्तर भी।’ प्रो. ऋषभदेव शर्मा की कविताओं में भी प्यार इसी विशालता के साथ उपस्थित है। कहीं प्यार अपनी कोमलतम संवेदनाओं का इजहार करता प्रतीत होता है ष्उस दिन पहली बार मैंने सोचा/फूल को कैसा लगता होगा/जब हम नोंचते हैं/ उसकी एक -एक पंखुड़ी! /तब मैंने फूल को /फिर छुआ /फिर सहलाया /फिर सूँघा ... /और मुझे लगा /हवाएं महक उठीं /प्यार की खुशबू से।’ और जब लगता है कि यह प्यार एकतरफा है और छुअन ज्यादतीय तो कविता कह उठती है ‘बहुत छूता था तुम्हें / मैं पहले /और सोचता था /तुम पुलकित हो रहे होगे। / पर उस दिन /तुम्हारे रोष की रोशनी में / दिखाई दिए मुझे /तुम्हारी त्वचा पर पड़े हुए /असंख्य नीले निशान। / तो क्या इतने दिनों / मैं /तुम्हारी केवल त्वचा छूता रहा /तुम्हें एक बार भी नहीं छू सका!’ और इसके बाद अपने प्रेम को दिए इस अनचाहे कष्ट की ग्लानि में शरीर भले ही नष्ट हो जाए लेकिन आत्मा प्रेम की प्यासी रहती है और किसी अन्य रूप में, कहीं और, प्रेम की ही तलाश में रहेगी -‘ठीक ही हुआ /बिखर गई मेरी पंखुड़ियाँ। / नहला गईं हवाओं को /अपनी खुशबू से। / मर कर भी /मैं मरा भी नहीं, /मिटा नहीं। /फिर से जी उठा /तुम्हारी साँसों में।’

इस संग्रह से प्रो. ऋषभदेव शर्मा के कुछ प्रेम गीत इतने लोकप्रिय हो चुके हैं कि इन्हें अब राष्ट्रीय प्रेम-गीत ही कहा जाना चाहिए। अमन जी ने ऐसे ही एक गीत को यहाँ भी स्थान दिया है ‘हर सुमन हर दीप तारा /अंजुरी में भर लिया / राग-रंगोली रचा कर /देहरी पर धर दिया /आज अर्पण के गगन में, लीन सब परिणाम /प्यार का पर्याय पूछा, सिंधु से कल शाम / बालुका पर लिख गई, लहरें तुम्हारा नाम।’

संगीत में प्रसिद्ध संगीतकार जब वाद्य यंत्र बजाते हैं तब कई बार, एक नोट बजाते हुए अचानक से कुछ और बजाने लगते हैं, जो पहले नोट का क्रमिक विस्तार नहीं, बल्कि उससे भिन्न है, लेकिन इससे संगीत बाधित नहीं होता, बल्कि और खूबसूरत और जीवंत हो उठता है। इसे Jumping Notes बजाना कहते हैं और ऐसा कर पाने के लिए एक विशेष दक्षता की आवश्यकता होती है। प्रो. ऋषभदेव शर्मा अपनी कविताओं में यह कर पाने के लिए प्रसिद्ध हैं। एक ही कविता में अनसुने बिंब और अनछुए प्रतीकों के माध्यम से वह न जाने कितने Jumping Notes बजा लेते हैं और वह भी Perfect Pitch और Perfect Tone esa। उदाहरण देखें - ‘जाने कैसे लिख लेते सब रोज नई गाथाएँ /इतने दिन से जूझ रहा मैं पूरी न एक कहानी’ यहाँ एक Jumping Notes लेते हुए लिखते हैं ‘साँझ घिरे जिसकी वेणी में बरसों बेला गूँथी /पत्थर की यह चोट शीश पर उसकी शेष निशानी’ और अचानक एक इससे भी बड़ा Jumping Notes लेते हैं जहाँ उनकी दृष्टि विस्तार पाती है, प्रेम वेदना में परिवर्तित होता है, और यह वेदना भी उनकी अपनी नहीं बल्कि प्रत्यक्ष तौर पर उत्तराखंड के कई गांवों की और अप्रत्यक्ष तौर पर समस्त मानव जाति की है ‘एक शहर था, चहल पहल थी, आबादी थी, घर थे /नई सदी में नदी रोककर, टिहरी पड़ी डुबानी’।

यूँ तो प्रो. ऋषभदेव शर्मा के सभी संग्रह विशेष हैं लेकिन ‘तेवरी’ इन मायनों में अलग है कि प्रो. शर्मा तेवरी के प्रवर्तकों में से एक हैं। गजल में तेवर का होना नया नहीं है, यह दुष्यंत से पहले भी होता रहा है लेकिन समय-समय पर दुष्यंत, अदम गोंडवी जैसे लोगों ने इस आग को और हवा दी। प्रो. शर्मा ने भी इसी आग को एक नया नाम तेवरी दिया और आम-जन की आवाज बने। हर सत्ता को लगता है कि किसी को भी सत्ता के खिलाफ बोलने की आजादी नहीं होनी चाहिए और हर दौर में ऐसे शायर होते आए हैं जिन्होंने सत्ता की कमियों को डंके की चोट पर उठाया। प्रो. शर्मा भी आम जनता की दशा-दुर्दशा से चिंतित हैं ‘आदमी की बौनसाई पीढ़ियों को /रोज गमलों में उगाया जा रहा है।’ सत्ता की खनक और धमक उन्हें चिंतित करती है - ‘पाँव का कालीन उनके हो गया मेरा शहर /कुर्सियों के म्यूजियम में खो गया मेरा शहर /पीठ पर नीले निशानों की उगी हैं बस्तियाँ /बोझ कितने ही गधों का ढो गया मेरा शहर।’ लेकिन सिर्फ चिंता व्यक्त कर देने भर से कर्तव्य की इतिश्री नहीं हो जाती, इसलिए वह आह्वान भी करते हैं ‘कुर्सी के जबसे उगे पैंने - पैंने सींग /बहुत मरखनी हो गई डालो इसे नकेल।’ सत्ता जब समाज की तरफ न देख कर व्यक्ति-विशेष की तरफ देखने लगे, तब कहना पड़ता है ‘कीर्तिगान हो रहे /राष्ट्रगान बंद है /फूटो ज्वालामुखी! /कि दिनमान बंद है।’ वर्तमान समय में जो चल रहा है उस पृष्ठभूमि में यदि इस तेवरी को देखें तो आज यह ज्यादा प्रासंगिक लगती है ‘नारे लगाएँ आप भी, या मौन हो रहें /क्या है जरूरी सोचिए रक्षा जुबान की? /वे आँख में कुणाल की तकुए गुभो (पिरो) रहे /तुम खींच लो अब कान तक डोरी कमान की।’ ऐसा नहीं है कि शायर का विरोध किसी व्यक्ति विशेष से होता है, शायर का विरोध उस सत्ता से है जो निरंकुश होती जा रही है। इसीलिए सत्ता बदलती रहती है, लेकिन विरोध की रचनाएं हर दौर में लगती है जैसे इसी सल्तनत के लिए लिखी गई हो। उदाहरण देखें ‘टुसिआए पाकड़ पर बैठकर भुजंगा/ बोल रहा ठाकुर जी, देख रहा दंगा। /भावों की मार-काट, मिली-जुली भाषा /तंगदिली, संगदिली, पट्टी और झाँसा।/ स्रोत सियासी कि गीत नहा रहे गंगा। /टुसिआए पाकड़ पर बैठकर भुजंगा /बोल रहा ठाकुर जी, देख रहा दंगा। /नक्शे में फस्ल-भरे, हरे खेत खींचो, /खून-पसीने का क्या, रंगों से सींचो, /देश हमारा न दिखे भूखा या नंगा।/ टुसिआए पाकड़ पर बैठकर भुजंगा /बोल रहा ठाकुर जी, देख रहा दंगा।’ यह रचना आज की नहीं है, वर्षों पहले इसे जानकीवल्लभ शास्त्री ने लिखा, लेकिन इसका क्या करें कि हुक्कमरान बदलते हैं, लेकिन सत्ता का चरित्र नहीं बदलता और इसीलिए प्रो. शर्मा जैसे शायर को कहना पड़ता है ‘गाँव, घर, नगर-नगर भूमि की पुकार /ताल, सर, लहर-लहर भूमि की पुकार / नींद की गजल नहीं आज मित्रवर!/जागृति के छंद भर भूमि की पुकार।’

‘तरकश’ संग्रह से ली कई कविताएं ‘तेवरी’ का ही विस्तार हैं। यहाँ भी कवि की चिंता समाज बचाने की ही है ‘एक ऊँचा तख्त जिस पर भेड़िया आसीन है /और मंदिर में सँपेरा मंत्रणा में लीन है /दे रहे उपदेश में गुरु गोलियाँ उन्माद की / आज पूजा के प्रसादों में मिली कोकीन है।’ पहले सत्ता में कुछ शर्म बची थी इसलिए, जनता का सेवक बनने का आडंबर ही सही, प्रयास होता था। आज जब हर क्षेत्र में तरक्की हो रही है तब इन नेताओं ने भी अपने छद्म छोले उतार दिए हैं और खुल कर सामने आ गए हैं ‘मैंने जाम पिलाए सबको मैंने जहर मिलाया है /आग लगाकर हाथ सेंकने लड़वाने में माहिर हूँ /मैं तो ईश्वर का बंदर हूँ देश-वेश मैं क्या जानूँ /अवध, हैदराबाद, मुंबई जहाँ कहो मैं हाजिर हूँ।’ ऐसी परिस्थितियाँ जब बन जाए, तब शायर के पास इस आह्वान के सिवा रास्ता ही क्या बचता है ‘धर्म, भाषा, जाति, दल का, आजकल

आतंक है /इन सभी का दुर्ग टूटे, एक ऐसा युद्ध हो /खून का व्यवसाय करते, लोग कुर्सी के लिए /वोट की दूकान टूटे, एक ऐसा युद्ध हो।'

'ताकि सनद रहे' शीर्षक संग्रह से ली गई कविताओं में कुछ लम्बी कविताएं हैं। इन कविताओं के विषय में विविधता है जो प्रेम, पर्यावरण, समाज, राजनीति और स्त्री-विमर्श तक को समेटे हुए है। इन लम्बी कविताओं को पढ़ते हुए मुझे ऐसे लंबे फोन कॉल की याद आती है जिसे प्रेमिका या पिता ने किया हो। प्रेमिका के लंबे कॉल में प्रेम की अधिकता, समय की सुई को रोक देती है और मनुष्य देर तक उस प्रेम का अनुभव कर रहा होता है। पिता के कॉल में सीख होती है, डांट होती है, उन सभी कार्यों का जिक्र होता है जिन्हें किया जाना था लेकिन नहीं किया गया, उन सभी डरों का सजीव चित्रण होता है जो पुत्र के आलस्य और नकारापन से आ सकती हैं। यह कॉल डराता है, लेकिन कही जा रही बातें सत्य होती हैं, हम यह भी जानते हैं। अंत में हर पिता यह हिम्मत भी बँधाते हैं कि सब ठीक हो जाएगा। इस संग्रह की कविताएं यही करती हैं। यह हमें पहले तो आईना दिखाती हैं और जब हमारे ही कर्म हमें सर्प की तरह डसने लगते हैं, वे हमें इस अंधकार से बाहर निकलने का मार्ग भी दिखाती हैं। औरतों की स्थिति पर लिखते हैं 'वे रसोई में अड़ी हैं,/ अड़ी रहें। /वे बिस्तर में पड़ी हैं, /पड़ी रहें। ध्यानी वे /संसद के बाहर खड़ी हैं, /खड़ी रहें? / गलतफहमी है आपको/ सिर्फ आधी आबादी नहीं हैं वे/ बाकी आधी दुनिया भी/ छिपी है उनके गर्भ में/ वे घुस पड़ीं अगर संसद के भीतर/ तो बदल जाएगा तमाम अंकगणित आपका/ उन्हें रोकना बेहद जरूरी है/ कुछ ऐसा करो/ कि वे जिस तरह संसद के बाहर खड़ी हैं/ खड़ी रहें।' और औरतों को ललकारते हुए लिखते हैं 'दुनिया भर की औरतों, एक हो ! /तुम्हारे पास कुछ भी नहीं है / खोने को - /सिवा मर्दों की गुलामी के !!'

आज विश्व जिस तरह युद्ध की विभीषिका झेल रहा है और इसके जो दूरगामी प्रभाव होंगे उसे सोचकर किसी का भी सिहर उठना स्वाभाविक है। अपनी कविता में प्रो. शर्मा लिखते हैं ''एक बार फिर सुनाई पड़ती है/ बच्चे की आवाज/ राजा बली के दरवाजे पर/ गुहार लगाते वामन की तरह/ मुझे तुम्हारी दुनिया में आने के लिए/ तीन डग जमीन चाहिए/ सिर्फ तीन डग/ साफ सुथरी जमीन/ तीन डग जमीन/ जिस पर कभी कोई युद्ध न लड़ा गया हो/ तीन डग जमीन/ जिसपर कभी किसी अस्त्र शस्त्र की छाया न पड़ी हो/ तीन डग जमीन/ जिसकी वायु शुद्ध और प्रकृति पवित्र हो।/ आवाज कहीं खो गई है/ बच्चा भी चुप है/ धरती की बूढी आया भी चुप है/ चुप हैं तमाम महामहिम भूमिपति/ तमाम बड़बोले भूमिपुत्र भी चुप हैं/ नहीं बची है किसी के पास/ तीन डग जमीन/ जिसकी वायु शुद्ध और प्रकृति पवित्र हो।' लेकिन साथ ही हिम्मत बँधाते हुए यह भी कहते हैं 'सृष्टि के आरंभ से / चली आती है यह दौड़, / भूकंप लीलते हैं बार-बार सभ्यताओं को /और अट्टहास करता है कालभैरव / तांडव नृत्य के बीच / पर / हर बार कहीं/ ढेरो-ढेर मलबे के तले/ हिलता है एक हाथ/ और उग आती हैं/ पाँच उँगलियाँ/ साँस लेती हुई/ सारे मलबे को चीरकर/ चुनौती देती हुई!'

पश्चिम में एक कहावत है Icing On The Cake जिसका मतलब है ऐसा काम जो आवश्यक न हो लेकिन यदि किया जाय तो सुंदरता थोड़ी बढ़ जाती है। केक के ऊपर यदि थोड़ी चित्रकारी कम भी की जाए तो उससे केक के स्वाद में कोई अंतर नहीं आएगा। लेकिन भारत में हम पैसा वसूल करना जानते हैं इसलिए अपने पैसे की पानी-पूरी खाने के बाद, मुफ्त में एक सूखी पूरी खाते हैं और उसे भी अपने स्वाद के अनुसार खट्टा-तीखा बनवाते हैं। इक्यावन कविताओं के बाद प्रो. ऋषभदेव शर्मा के ३२ मुक्तक, सूखी पूरी की तरह हैं, जिनका स्वाद हमारा जायका बढ़ाती है। या यूँ कहें कि एक अच्छे दावत के बाद ये मुक्तक मिठाई की तरह हैं जिनके बिना दावत अधूरा सा लगता। इन मुक्तकों के विषय और कविताओं के विषय में तारतम्यता है। प्यार की बात कुछ इस तरह बयां होती है 'मैं जिसे गुस्सा समझ ताजिंदगी डरता रहा /डायरी ने राज खोला, आपका वह प्यार था।', विश्वासघात के बारे में लिखते हैं 'मैं जानता हूँ, आज फिर तुमने झूठ कहा है / पर क्या करूँ, विश्वास की आदत से लाचार हूँ।', नेता के चरित्र में बदलाव तो संभव नहीं 'नेता की रग में पैठ के, कुर्सी के कीट ने /क्या-क्या किया कमाल, हमसे न पूछिए।', इसलिए लोगों को सलाह भी देते हैं 'मौन ही रहना उचित है, इस नए माहौल में /प्यार की बातें न करिए, बस सियासत कीजिए।' ऐसे माहौल में डर लगना स्वाभाविक है, प्रो. शर्मा इस डर को यूँ लिखते हैं 'राह चलते राह से डर सा लगे है आजकल। /आप अपनी छाँह से डर सा लगे है आजकल। /चर्चा चली है आ गए सियासत में साँप भी! /यार! अपनी बाँह से डर सा लगे है आजकल।' और अंत में कवि कर्म निभाते हुए एक मुक्तक में लिखते हैं 'संभव नहीं कि शक्ति हो औ' ज़्यादती न हो। /इतना करो कि ज़्यादती को ज़्यादती कहो। /जनता के चारणो! सुनो, सत्ता के मत बनो /तुम जागते रहो कि कहीं ज़्यादती न हो।'

जैसे किसी अच्छी फिल्म के ट्रेलर को बनाने में इस बात का ध्यान रखा जाता है कि इसे देखने के बाद दर्शक फिल्म देखने आएं, वैसे ही मेरा विश्वास है कि अमन कुमार द्वारा चयनित इन कविताओं और मुक्तकों को पढ़ने के बाद पाठक प्रो. ऋषभदेव शर्मा के कवि-कर्म को और नजदीक से जानना चाहेंगे। अमन जी ने तो लिख ही दिया है - ''कवि ऋषभदेव शर्मा के काव्य से हम न सिर्फ अपने इतिहास-भूगोल को जान सकते हैं बल्कि सामाजिक ताने-बाने और आजादी के बाद अपनी औकात को भी पहचान सकते हैं। कवि ने अपना काम सचेतक के रूप में कर दिया है, अब हम पाठक जिम्मेदार नागरिक की तरह कितने सजग हो पाते हैं। यह समय बताएगा।'' इस बीच प्रो. ऋषभदेव शर्मा 'दुःख सुख सरिस प्रसंसा गारी 'के सिद्धांत का पालन करते हुए, वही करते रहेंगे जिसके लिए वह प्रसिद्ध हैं ''लहरों पे प्यार प्यार प्यार प्यार लिख रहा / कहते हैं लोग - बाग दीवाना हुआ ऋषभ।''

लघुकथा

भुखमरी

- ऋषभदेव शर्मा

पहले पृष्ठ का समाचार-

खाद्यमंत्री ने लोकसभा को बताया कि देश से भुखमरी समाप्त कर दी गई है। पिछले वर्ष गरीबी रेखा के नीचे जी रहे परिवारों में से अधिकांश की स्थिति अब गरीबी-रेखा से ऊपर है।

अंतिम पृष्ठ का समाचार-

पुलिस ने राजधानी की एक सड़क पर कुत्तों की तरह भौंकते और लोगों पर झपटते एक बच्चे को गिरफ्तार करके केंद्रीय अस्पताल पहुँचा दिया। डाक्टरों का कहना है कि बच्चा कुपोषण का शिकार है। जाँच करने पर पता चला है कि जब उसे भूख से बिलखता छोड़कर उसके गरीब माँ-बाप मजदूरी पर चले जाते हैं, तो वह गली की एक कुतिया के स्तनों से चिपट जाता है। पिल्लों से उसकी दोस्ती हो गई है, यों वे उसे अपने हिस्से का दूध पीने देते हैं! ० (२४.७.१९८२)

डॉ. चंदन कुमारी

'शोधादर्श' का विशेषांक - प्रेम बना रहे

पंजी. संख्या UPHIN/2018/77444 ISSN 2582-1288

₹ 200 वर्ष : 5 अंक : 1 दिसंबर,2022-फरवरी, 2023

शोधादर्श

संदर्भित एवं समीक्षित शोध आलेखों की त्रैमासिक पत्रिका

गुरु गोबिन्द सिंह

प्रो. ऋषभदेव शर्मा विशेषांक

प्रेम बना रहे

गन्ने के गाँव खतौली से मोतियों के शहर हैदराबाद तक की संघर्ष और कामयाबी भरी अपनी यात्रा के विविध पड़ावों में जन-जन से संपर्क सूत्र साधतेय सहज गति से अविराम मनःस्थिति के साथ निरंतर साहित्य सृजन में लीन और संगोष्ठियों में सदैव तत्पर रहनेवाले प्रो. ऋषभदेव शर्मा (१९५७) के व्यक्तित्व में अपनत्व की मिठास और वैदुष्य की कांति बड़ी ही सहज भाव से भासती है। अपनी इस सहजता के कारण ही आज यह व्यक्तित्व न सिर्फ भारतवर्ष की भूमि पर ही, वरन हिंदी के वैश्विक पटल पर भी अपनी सशक्त पहचान रखता है। मित्र के रूप में वे अपनी मित्रमंडली की आभा हैं, गुरु के रूप में अपने छात्रों के पथ-प्रदर्शक हैं, एक साहित्यकार के रूप में वे निरंतर साहित्य सेवा में रत हैं और अपने अग्रजों के प्रति परम विनीत हैं। जहाँ 'प्रेम बना रहे' का सूत्रवत प्रयोग इनके व्यक्तित्व का अभिन्न अंग है, वहीं एक प्रखर आलोचक की दृष्टि रखने वाले ऋषभदेव शर्मा समाज पर अपनी तीक्ष्ण दृष्टि रखते हुए तेवरी काव्य विधा के एक प्रवर्तक के रूप में भी सुविख्यात हैं। इस व्यक्तित्व के अंतरंग और बहिरंग को समग्रता में आँकने के प्रयास के फलस्वरूप ही नजीबाबाद (उत्तर प्रदेश) से निकलने वाली त्रैमासिक शोध पत्रिका 'शोधादर्श' ने अपना दिसंबर२०२२ - फरवरी२०२३ का अंक 'प्रेम बना रहे' विशेषांक के रूप में प्रकाशित किया है। इसके लिए संपादक अमन कुमार बधाई के पात्र हैं। पत्रिका के पक्ष में अतिथि संपादक डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह ने यह आशा व्यक्त की है कि "यह अंक उत्तरप्रदेश के खतौली गाँव से हैदराबाद एवं संपूर्ण दक्षिण भारत तक प्रोफेसर ऋषभदेव शर्मा की व्यक्तिगत एवं साहित्यिक यात्रा का दिग्दर्शन कराने में पूर्णतः सफल होगा।"

यह अंक इस व्यक्तित्व के इर्द-गिर्द विद्यमान एक आभामंडल को भली प्रकार उजागर करता है। इस आभामंडल में उनकी साहित्यिकता और आंतरिकता दोनों ही स्वर्णरश्मियों की भांति विकीर्ण प्रतीत होती हैं। उनकी आंतरिकता के एक पक्ष को उद्घाटित करते हुए संपादकीय में लिखा गया है कि आपको ऐसे पर्यावरण को बचाने की चिंता है जो झूठ और मक्कारी से दूषित किया जा रहा है। कहना ही होगा कि यह आभामंडल आभासी नहीं है और आकाशी भी नहीं है। यह यथार्थ के ठोस भूतल पर, इस व्यक्तित्व के नैकट्य में रहे अथवा सान्निध्य प्राप्त साहित्यिक रुचि संपन्न व्यक्तियों की स्वानुभूत की गई अनुभूति एवं ऋषभ-साहित्य के स्वाध्याय से गृहीत निष्कर्षों के संयोजन के फलस्वरूप सामने आया हुआ आभामंडल है। इसकी निर्मिति आकृष्ट करती है। इस आकर्षण में स्वाभाविकता तो है पर उससे कहीं अधिक अपनत्व की प्रगाढ़ता है जो इस विशेषांक के शीर्षक की तथता का द्योतक भी है। पत्रिका में समस्त आलेखों को विषयानुसार पाँच खंडों में वर्गीकृत किया गया है। वे खंड हैं- १. आँखिन की देखी, २. कागद की लेखी, ३. गहरे पानी पैठ, ४. चकमक में आग और ५. कबहूँ न जाइ खुमार। इन खंडों में ऋषभदेव शर्मा के जीवन एवं साहित्य के अंतरंग पहलुओं को छूने की चेष्टा की गई है। हाल ही में डॉ. गुर्रमकोंडा नीरजा द्वारा दो भागों में संपादित लगभग ७०० पृष्ठ का बृहत अभिनंदन ग्रंथ "धूप के अक्षर" (२०२२) लोकार्पित हुआ, और उसके बाद यह विशेषांक 'प्रेम बना रहे' आपके समक्ष प्रस्तुत है। अगर इसे उसका परिपूरक भी कहा जाए तो गलत नहीं होगा।

विशेषांक में सम्मिलित लेखकों ने ऋषभदेव शर्मा के व्यक्तित्व के जिन अंतरंग पहलुओं का साक्षात किया और उसे यहाँ शब्दरूप दिया, उसकी बानगी देखते चलें-

- "नए लेखकों को प्रोत्साहित किया ही जाना चाहिए।...अपनी आलोचना को भी इस तरह अपनाने की कला और छोटी-छोटी बातों में भी दूसरों के नाम को आगे बढाने की प्रवृत्ति- दोनों ही विशेषताएँ आज के जमाने में विरल हैं। निज गुन श्रवन सुनत सकुचाहीं। पर गुन सुनत अधिक हरषाहीं।।" (प्रवीण प्रणव)
- "उत्तर से आकर सुगंधित हवा का एक झोंका/ दक्खिनी भाषा में घुलमिल गया। आपकी वाणी से/ महीन तराश वाले शब्द निकलते हैं। आपका गंभीर स्वर/चित्ताकर्षक लगता है,/ आपको सुनना धारोष्ण दूध पीने जैसा है।" (कविता : धन्य पुरुष, प्रो. एन. गोपि)
- 'विद्वान होते हुए भी विद्वत्ता के आभामंडल से गर्वित न होकर सहजता और अल्हड़पन से सभी के साथ सामंजस्य बना लेना उनकी विशिष्टता है। वे देश के एक बड़े साहित्यकार हैं, यह सभी जानते हैं लेकिन वे एक अच्छे और व्यापक दृष्टिबोध वाले पत्रकार और मीडिया लेखक भी हैं, इसे कम लोग ही जानते हैं।' (अरविंद सिंह)
- 'ऋषभदेव जी मँजे हुए पत्रकार और समसामयिक विषयों को लेकर लिखने वाले फीचर लेखक भी हैं।' (प्रो. अश्विनीकुमार शुक्ल)
- प्रो. संजीव चिलुकमारि ने अपने आलेख में उन्हें 'ज्ञान तापस' की संज्ञा से विभूषित किया है।
- डॉ. मंजु शर्मा ने इनके व्यक्तित्व के लिए लिखा है 'कबीर जैसा मन और तुलसी जैसा भाव'।

इन अभिव्यक्तियों में अपनत्व विशेष प्रभावी हुआ है। यथार्थ की ये अभिव्यक्तियाँ उन्हें अतिशयोक्ति लग सकती हैं जो इनके व्यक्तित्व एवं साहित्य से सर्वथा अनजान हैं। इसलिए भी यह विशेषांक पठनीय और शोधोपयोगी है। प्रो. देवराज का 'खतौली का औचक दौरा' आलेख विशेष रूप से मर्मस्पर्शी है। इस यांत्रिक, भावहीन और मतलबी दुनिया में आत्मीय स्नेह का स्पर्श पाकर मन अभिभूत हो, कुछ पल को ठिठक जाता है। विद्वत्ता अंतःप्रकाश भले हो पर इसे प्रकाशित करने वाले दीये की घी-बाती तो स्नेह ही है। स्नेह की अभिव्यंजना का प्रतिफल ही 'प्रेम बना रहे' है। यानी ये आलेख रस्मी-रिवायती नहीं हैं, बल्कि उस प्रेम का प्रमाण हैं जो दक्षिण में हिंदी-सेवा करते हुए

डॉ. ऋषभदेव शर्मा ने कमाया है!

‘कविता के पक्ष में’ पुस्तक का संदर्भ लेते हुए डॉ. जी नीरजा ने लेखकद्वय (ऋषभदेव शर्मा और पूर्णिमा शर्मा) द्वारा चिह्नित कविता के लोकतांत्रिक दायित्व का उल्लेख किया है जो इस प्रकार है - ‘‘युग जीवन को अपने में समेटना, समय के साथ सत्य को पकड़ना, मनुष्य को बिना किसी लागलपेट के संबोधित करना, प्रकाश और उष्णता की संघर्षशील संस्कृति की स्थापना करना और प्रत्येक व्यक्ति के भीतर दायित्व बोध का विकास करके क्रांति की भूमिका तैयार करना।’’ युगों-युगों से मनुष्यता और लोकतंत्र को जीवित रखने का दायित्व कविता ने सँभाला है। कविता के जिन लोकतांत्रिक दायित्वों को कवि ऋषभदेव शर्मा ने गिनाया है स्वयं को भी उन्होंने इन दायित्वों से बाँधे रखा है। युग की विषमता और भेदभरी दृष्टि जो हर संवेदनशील हृदय में शूल चुभाती है, वह इनके लिए भी शूल है और स्वतंत्रता के अमर बलिदानियों के बलिदान की व्यर्थता को महसूस कर यह कवि कहता है- ‘मेरे भारत में सर्वोदय खंडित स्वर्णिम स्वप्न हो गया।’

पत्रिका के आरंभिक ३ खंड जहाँ डॉ. ऋषभदेव शर्मा के व्यक्तित्व के निरूपण और कृतित्व के मूल्यांकन को समर्पित हैं, वहीं चौथे खंड में ‘विचार कोश’ के रूप में उनके १०८ विचारों की माला तथा पाँचवें खंड में ५१ चयनित कविताओं की प्रस्तुति ने इस १३४ पृष्ठीय विशेषांक को और भी संग्रहणीय बना दिया है।

समीक्षक : डॉ. चंदन कुमारी, संकाय सदस्य, डॉ. बी. आर. अम्बेडकर विश्वविद्यालय सामाजिक विज्ञान, अम्बेडकर नगर (महू)। संपर्क : संजीव कुमार, आई एफ ए ऑफिस, द्वारा इन्फैंट्री स्कूल, महू (मध्यप्रदेश) ४५३४४१.
मोबाइल ८२१०६१५०४६.
ईमेल- chandan82hindi@gmail.com

लघुकथा

मोहलत

- ऋषभदेव शर्मा

एक ट्रक दुर्घटना हो गई। बिल्लू को भारी चोटें आई। अस्पताल मे दाखिल किया गया। कोई कोशिश काम न आई और वह चल बसा।

बिल्लू के परिवार वाले डॉक्टर के पाँवों पर गिड़गिड़ा रहे थे, ‘डॉक्टर साहब, हम गरीब आदमी हैं। मेहनत मजदूरी करके दो जून रोटी जुटा पाते हैं। हमें एक हफ्ते की मोहलत दे दीजिए, कहीं से किसी से कर्जा लेकर आपकी फीस चुका देंगे। रहम कीजिए, डॉक्टर साहब।’

डॉक्टर का चेहरा भावशून्य रहा, होठों ने स्पष्ट किया, ‘मोहलत ही मोहलत है. मैंने लाश रोक ली है, पेमेंट कर जाना और लाश ले जाना। ० (६.१२.१९८१)

गुलेल

-ऋषभदेव शर्मा

एक दिन -

वह मुँह लटकाए गली से गुजर रहा था। उसने कभी यह न सोचा था कि ईमानदारी की जिद उसे इतनी महँगी पड़ेगी। उसे उसके साथियों ने झूठे आरोपों में फँसा दिया था। उसकी नौकरी छिन चुकी थी। साथियों ने जश्न मनाया था। रोजी छिनने से वह उदास था।

तभी उसने देखा, एक बच्ची के हाथ से कौआ टुकड़ा छीन कर ले गया। रोटी छिनने से बच्ची रोने लगी।

अगले दिन -

वह मुँह लटकाए उसी गली से गुजर रहा था। तय नहीं कर पा रहा था कि रोटी और ईमानदारी में से किसे चुने, जबकि उसे दोनों की ही जरूरत है। तभी उसने देखा, वही बच्ची हाथ में गुलेल लिए कौओं पर पत्थर दाग रही है! ० (२५.७.१९८२)

संवाद

- ऋषभदेव शर्मा

प्रथम अंक :
यह कैसा शोर है री ?
शादी है।
बहुत सजावट है, बहुत धूमधाम?
और बहुत दहेज भी!
द्वितीय अंक :
यह कैसा शोर है री?
बहू जल मरी।
बहुत बुरा हुआ, बहुत दुःखद?
और बहुत अन्याय भी !
तृतीय अंक :
यह कैसा शोर है री?
जुलूस है।
बहुत भीड़ है, बहुत नारे?
और बहुत गुस्सा भी!
चतुर्थ अंक :
यह कैसा शोर है री?
लड़कियाँ हैं।
बहुत नई, बहुत तेज?
और बहुत विद्रोही भी। ० (२६.७.१९८२)

पूजाघर

- ऋषभदेव शर्मा

अखबारों में लगातार छप रहा था- चंडीगढ़ में सिखों का प्रदर्शन, मंदिर का पुजारी मरा, हिंदुओं ने किया बंद का आह्वान, जालंधर में कर्फ्यू.. वगैरह वगैरह!

इन समाचारों की छाया में दो बच्चे गुरमीत और सोनिया सिर जोड़े बतिया रहे थे। गुरमीत के पापा और सोनिया के डैडी एक ही बाप की औलाद हैं। लेकिन अपने परंपरागत रिवाज के मुताबिक बाप ने एक बेटे को हिंदू संस्कार दिए थे और दूसरे को सिख। दोनों के घरों में गुरुओं की भी पूजा होती थी और अवतारों की भी।

पर आज गुरमीत रो रोकर सोनिया का बता रहा था, ‘पापा ने भगवान राम वाला कैलेंडर कमरे की दीवार पर से उतार दिया है।’

सोनिया भी रो पड़ी, ‘भैया! डैडी ने आज गुरु नानक की तस्वीर पूजाघर से हटा दी। मैंने वहीं रखने की जिद की तो मेरी पिटाई कर दी।’ फिर राज खोलने के अंदाज में बोली, ष्पर मैंने चोरी से वह तस्वीर अपने बस्ते में छिपा ली है।’

गुरमीत ने इधर-उधर देखा, जैसे किसी के सुन लेने का डर हो, ‘रो मत मेरी बहन! हम दोनों अलग पूजाघर बनाएँगे इन दोनों तस्वीरो का। देख मैंने भी पापा का उतारा हुआ कैलेंडर छिपाया हुआ है।’

और उसने अपने कपड़ों में से मुड़ा-तुड़ा कैलेंडर निकालकर सोनिया के बस्ते वाली तस्वीर के बराबर में रख दिया। ० (३१.७.१९८२)

चकमक में है जीवनधारा की आग

डॉ. बी. बालाजी

डॉ. ऋषभदेव शर्मा को बचपन से ही लिखने का शौक रहा है। १९७० की बात है। कक्षा आठ के वार्षिक अवकाश के दौरान विभिन्न सामाजिक विषयों पर निबंध लिखे। कहा जा सकता है कि उनके उस प्रारंभिक लेखन ने ही उन्हें १०० से भी अधिक ग्रंथों के भूमिका लेखक के रूप में उभारने की नींव रखी हो। डॉ. शर्मा के रचना संसार की झलक 'प्रेम बना रहे' के कवर पर देख सकते हैं।

कविता के संबंध में एक उक्ति प्रसिद्ध है - 'वियोगी होगा पहला कवि/आह से उपजा होगा गान/ निकलकर आँखों से चुपचाप/ बही होगी कविता अनजान'। शोधादर्श के विशेषांक (वर्ष ५, अंक १, दिसंबर २०२२-फरवरी २०२३) 'प्रेम बना रहे' के नायक डॉ. ऋषभदेव शर्मा के लिए यह उक्ति सटीक हो सकती है। जय जवान-जय किसान का नारा देने वाले लोकप्रिय जन नेता, भारत के दूसरे प्रधान मंत्री लाल बहादुर शास्त्री के निधन पर इन्होंने अपनी पहली तुकबंदी रची थी अर्थात सन् १९६५ में। उस समय आप की आयु ८ वर्ष की रही होगी। वह दिन है और आज का दिन, इस कलमकार की कलम की स्याही ने कई अद्‌भुत रचनाएँ हिंदी जगत को दी हैं। बाल्यकाल से साहित्य लेखन की ओर आकृष्ट बालक ऋषभदेव ने जब भी मौका मिला अपनी कलम चलाई। यह भी संयोग कहा जा सकता है कि ऋषभदेव शर्मा, 'देवराज' उपनाम से लिखा करते थे और कालांतर में इसी नाम के प्रतिभाशाली और प्रभावशाली व्यक्तित्व के धनी प्रो. देवराज से १९८१ में श्री कुंद कुंद जैन डिग्री कॉलेज में आप की भेंट हुई और यह भेंट अंतरंग व अभिन्न मित्रता में परिवर्तित हो गई। दोनों ने मिलकर तेवरी काव्यांदोलन की आधिकारिक घोषणा की और उसे जनता के बीच ले गए। तेवरी जनता की आवाज बन गई।

'शोधादर्श' के 'प्रेम बना रहे' विशेषांक के खंड-४ 'चकमक में आग' के अंतर्गत 'जीवनधारा...' शीर्षक से डॉ. ऋषभदेव शर्मा का वर्षानुक्रम में जीवन परिचय संकलित किया गया है। संकलनकर्ता डॉ. गुर्रमकोंडा नीरजा ने यह सामग्री हिंदी के पाठक वर्ग के लिए संजोई है। अब यह सामग्री एक ऐतिहासिक धरोहर बन गई है। विशेषकर शोधार्थियों के लिए। 'जीवनधारा' में डॉ. ऋषभदेव शर्मा के जन्म, परिवार, प्राथमिक शिक्षा, इंटर व उच्च शिक्षा, जीविका के लिए आसूचना ब्यूरो में कार्य और वहाँ से इस्ततीफा देकर, दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, मद्रास केंद्र के उच्च शिक्षा और शोध संस्थान में हिंदी प्राध्यापक के रूप में नियुक्ति, विपुल साहित्य लेखन और उनको प्राप्त पुरस्कारों की जानकारी वर्षक्रम में दी गई है। पाठकों को यह जानकर सुखद संयोग लगेगा कि १८५७ की क्रांति के ठीक १०० साल बाद १९५७ में ४ जुलाई के दिन मेरठ के समीप (लगभग ४० कि. मी दूर) गंगधाडी, जिला मुजफ्फर नगर, उ.प्र. में हुआ। आप श्रीमती लाड़ो देवी और श्री चतुर्देव शर्मा शास्त्री की तीसरी संतान हैं। प्राथमिक शिक्षा गगंधाड़ी में हुई और जब उनका परिवार उस समय के निकटवर्ती औद्योगिक कस्बे खतौली में निवास करने आया तो, कक्षा पाँच तक वहीं पढ़ाई की। 'जीवनधारा' से पता चलता है कि डॉ. ऋषभदेव शर्मा ने न केवल कविताएँ रची हैं बल्कि आरंभ में उन्होंने 'धरोहर' आदि कई सारी कहानियाँ, 'त्याग की देवी' और 'जीवन ज्योति' नामक उपन्यास भी लिखे हैं। दूसरा उपन्यास शामली उ.प्र. से प्रकाशित साप्ताहिक 'युवा चक्र' (१९७४) में धारावाहिक के रूप में छपा था। पहला उपन्यास अप्रकाशित है (उसे अब छप जाना चाहिए)। उनकी एक और आरंभिक रचना अप्रकाशित है - वसुंधरा। यह मिथकीय खंड काव्य है। इसकी रचना कवि ने कामायनी और उर्वशी से प्रेरणा ग्रहण कर की थी। यह वराह अवतार द्वारा पृथ्वी की मुक्ति के आख्यान पर आधारित है।

डॉ. ऋषभदेव शर्मा को बचपन से ही लिखने का शौक रहा है। १९७० की बात है। कक्षा आठ के वार्षिक अवकाश के दौरान विभिन्न सामाजिक विषयों पर निबंध लिखे। कहा जा सकता है कि उनके उस प्रारंभिक लेखन ने ही उन्हें १०० से भी अधिक ग्रंथों के भूमिका लेखक के रूप में उभारने की नींव रखी हो। डॉ. शर्मा के रचना संसार की झलक 'प्रेम बना रहे' के कवर पर देख सकते हैं। वहाँ उनके द्वारा रची व संपादित पुस्तकों और उनके कृतित्व व व्यक्तित्व पर प्रकाशित ग्रंथों के कवरों की झलकियाँ प्रस्तुत की गई हैं। पुस्तकों की संख्या ५० है। डॉ. शर्मा का रचना संसार काफी विस्तृत है- काव्य संग्रह : तेवरी (१९८२), तरकश (१९९६), ताकि सनद रहे (२००२), देहरी (२०११), प्रेम बना रहे (२०१२), सूँ साँ माणस गंध (२०१३) और धूप ने कविता लिखी है (२०१४), आलोचना संग्रह : तेवरी चर्चा (१९८७), हिंदी कविता : आठवाँ-नवाँ दशक (१९९४), साहित्येतर हिंदी अनुवाद विमर्श (२०००), कविता का समकाल (२०११), हिंदी भाषा के बढ़ते कदम (२०१५), कविता के पक्ष में (२०१६), कथाकारों की दुनिया (२०१७), साहित्य, संस्कृति और भाषा (२०२१), हिंदी कविता : अतीत से वर्तमान (२०२१), वैचारिक आलेख संग्रह : संपादकीयम् (२०१९), समकाल से मुठभेड (२०१९), सवाल और सरोकार (२०२०), लोकतंत्र के घाट पर : इलेक्शन गाथा (२०२०), कोरोना काल की डायरी (२०२०), रामायण संदर्शन (२०२२) इनके अतिरिक्त डॉ. शर्मा ने अनेक विषयों के पुस्तकों का संपादन किया है- कविता, आलोचना, अभिनंदन ग्रंथ, अनुवाद व पत्रकारिता, पत्रिकाएँ आदि। संपादित पुस्तकों की चर्चा 'जीवनधारा' के अंतर्गत नहीं है, जिनकी जानकारी कवर से मिलती है - पदचिह्न बोलते हैं, अनुवाद का सामायिक परिप्रेक्ष्य, भाषा की भीतरी परतें, प्रेमचंद की भाषाई चेतना, वृद्धावस्था विमर्श, भारतीय भाषा पत्रकारिता, अन्वेषी, निरभै होइ निसंक के प्रतीक, उत्तर आधुनिकता - साहित्य और मीडिया, अंधेरे में - पुनर्पाठ, संकल्पना, समकालीन सरोकार और साहित्य, समकालीन सृजन की समकालीनता, तत्त्वदर्शी निशंक आदि।

इसी खंड में डॉ. गुर्रमकोंडा नीरजा ने डॉ. ऋषभदेव शर्मा द्वारा लिखित वैचारिक लेखों व आलोचनाओं से चुने हुए १०८ उद्धरणों का संकलन प्रस्तुत किया है। शीर्षक है 'ऋषभदेव शर्मा विचार कोश'। यह कोश है इसीलिए हिंदी वर्णों का अनुक्रम भी है। इस कोश से ज्ञात होता है कि संकलकर्ता ने बड़ी संजीदगी से सामग्री इकट्ठी करके उसे बड़ी खूबसूरती के साथ पेश किया है। दस पृष्ठों की यह सामग्री किसी शोधार्थी के कम से कम ५० पृष्ठों के वैचारिक लेख में परिवर्तित हो सकती है। शोधार्थी को प्रोत्साहित करने के लिए कुछ उद्धरणों के शीर्षक देना भी उपयोगी सिद्ध हो सकता है। यथा - (१) अंग्रेजी शिक्षा, (२) अनुवाद : भाषा के दो रूप, (३) अस्मिता विमर्श, (४) आक्रोश : अगीत, (५) आधुनिक बोध, (६) आधिनिकता : मृत्युबोध, (७) उत्तराधुनिक भाषा संकट, (८) उपभोक्तावाद : बाजार की संस्कृति, (९) कविता :

प्रेम बनाम बाजार, (१०) कविता : राजनीति, (११) कविता : राष्ट्रीयता, (१२) कविता : लोकसंपृक्ति : रिश्ते नाते, (१३) कविता : व्यक्ति बनाम समाज, (१४) कविता : समकालीनता : लोक संपत्ति, (१५) काव्य प्रयोजन : जन जागरण, (१६) काव्य प्रयोजन : शिवेतर क्षतये, (१७) काव्य प्रयोजन : साहित्य का उद्देश्य, (१८) काव्यभाषा के बीज : जनभाषा, (१६) गजल, (२०) गजल का वैशिष्ट्य, (२१) चेतना : राष्ट्रीय, (२२) चेतना : राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय, (२३) जनसंचार : भाषारूप, (२४) जनसंचार : हिंदी भाषा का सामर्थ्य, आदि।

यहाँ उल्लेखित इन शीर्षकों से डॉ. ऋषभदेव शर्मा की वैचारिकता की गहनता का आकलन सहज ही हो जाता है। प्रस्तुत लेख में केवल पाँच उद्धरणों पर चर्चा की जा रही है।

डॉ. ऋषभदेव शर्मा ने अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा को मिथ बताया है और कहा है कि ''भारतीय बालकों को जन्मघुट्टी में अंग्रेजी पिलाकर आजन्म विकलांगता की ओर धकेला जा रहा है।'' (१. अंग्रेजी शिक्षा मिथ, ऋषभदेव शर्मा विचार कोश, शोधादर्श, वर्ष ५, अंक १, पृ. १०२) बालकों की आरंभिक शिक्षा उनकी अपनी मातृभाषा में होना चाहिए। बालक के मानसिक विकास के लिए यह बहुत महत्वपूर्ण होता है। बालपन में बालक गणित, विज्ञान, भूगोल आदि की अवधारणाएँ जितनी सरलता से अपनी मातृभाषा में आत्मसात कर सकता है, उतनी सरलता से किसी अन्य भाषा में नहीं। अन्य भाषा में बालकों का आरंभिक शिक्षण होने से उनके मौलिक चिंतन-मनन में बाधा हो सकती है, जोकि किसी मानसिक विकालंगता से कम नहीं होती है। इसी अवस्था की ओर इशारा करते हुए लेखक ने चिंता जताई है। बालकों के आरंक्षिक शिक्षा के क्षेत्र में हुए शोध भी यही बताते हैं। बालकों के अभिभावक अंग्रेजी माध्यम के स्कूलों पर निर्भर हैं क्योंकि उनका मानना है कि मातृभाषा या हिंदी प्रौद्योगिकी के शिक्षण के लिए उपयुक्त नहीं है। प्रौद्योगिकी के शिक्षण के बिना बालकों का भविष्य उज्ज्वल नहीं हो सकता है। डॉ. शर्मा ने इस तर्क यह कहकर खंडित कर दिया है कि आज स्थिति बदल चुकी है। तकनीकी और भाषा दोनों ने इस अवधि में एक दूसरे के प्रति जो दोस्ताना रवैया अख्तियार किया है, उसने यह साबित कर दिया है कि प्रौद्योगिकी के लिए हिंदी भाषा सहज और आत्मीय है। (६०. हिंदी प्रौद्योगिकी, वही, पृ. १०६)। लेखक ने स्पष्ट किया है कि अब स्थिति बदल रही है। हिंदी में भी प्रौद्योगिकी की शब्दावली विकसित हो चुकी है। पाठ्यक्रम बन रहे हैं। नई शिक्षा नीति २०२० के लागू हो जाने पर बालकों को अपनी मातृभाषा या हिंदी में माध्यम से आरंभिक शिक्षा के बृहत अवसर मिलेंगे।

स्वतंत्र भारत में हिंदी स्वीकृत राजभाषा होते हुए भी दोयम दर्जे पर है। कारण अनेक हो सकते हैं किंतु महत्वपूर्ण कारण है सरकार की इच्छ शक्ति में कमी। संवैधानिक प्रावधानों के बावजूद अमृतकाल की घड़ी तक भी यही कहा-सुना जा रहा है कि हिंदी में कार्य करने के लिए प्रयास जारी हैं। अंग्रेजी 'सह राजभाषा' थी किंतु हमने व्यवहार में हिंदी को 'सह राजभाषा' बना दिया। इस स्थिति को बदलने के अवसर को डॉ. शर्मा ने पहचान लिया है - ''विश्व व्यवस्था में राजनैतिक और आर्थिक परिदृश्य पर आज जब भारत पुनः उभर रहा है, यही सही समय है कि हम अपनी राष्ट्रभाषा-राजभाषा- संपर्कभाषा हिंदी का संवैधानिक सम्मान व्यावहारिक रूप में बहाल करें। विश्वभाषा के रूप में हिंदी की प्रतिष्ठा का यही वरेण्य मार्ग है।'' (६८. हिंदी : राष्ट्रभाषा : विश्वभाषा, वही, पृ. ११०) भारत के स्वतंत्रता के समय विश्वभर के शैक्षणिक संस्थाओं व विश्वविद्यालयों ने यह मानकर कि भारत की राष्ट्रभाषा तो हिंदी ही होगी, अपने यहाँ हिंदी विभागों की स्थापना की थी। भारत से व्यापार करना होगा तो यही भाषा उनके लिए द्वार खोलेगी। किंतु क्रमेन हिंदी का महत्व उसकी जन्मस्थली पर ही घटता गया और विश्व में हिंदी का डंका बजने से पहले ही शांत हो गया। किंतु अब फिर से स्थिति में परिवर्तन हो रहा है। भारत और हिंदी के लिए अवसर बन रहे हैं। भारत एक बड़ा बाजार होने के कारण ही अपनी बात मनवा रहा है। जन संचार के माध्यमों में कुछ वर्ष पहले जहाँ केवल अंग्रेजी का प्रयोग होता रहा है, वहीं अब हिंदी का प्रयोग बढ़ने लगा है। हिंदी का सामर्थ्य बढ़ रहा है। जन संचार माध्यमों के अधिपति चाहे विदेशी हों या स्वदेशी भारतीय भाषा में सामग्री तैयार करवा रहे हैं। विशेष रूप से हिंदी में। इस पर प्रकाश डालते हुए डॉ. ऋषभदेव शर्मा ने कहा है कि ''साहित्य की तुलना में संचार माध्यमों का तान-बाना अधिक जटिल और व्यापक है क्योंकि वे तुरंत और दूरगामी असर करते हैं। भूमंडलीकरण ने इन्हें अनेक चैनल ही उपलब्ध नहीं कराए हैं, इंटनेट और वेबसाइट के रूप में अंतरराष्ट्रीयता के नए अस्त्र-शस्त्र भी मुहैया कराए हैं। परिणाम स्वरूप संचार माध्यमों की त्वरा के अनुरूप भाषा में भी नए शब्दों, वाक्यों, अभिव्यक्तियों और वाक्य संयोजन की विधियों को समावेश हुआ है। इस सबसे हिंदी भाषा के सामर्थ्य में वृद्धि हुई है।'' (२४. जन संचार : हिंदी भाषा का समार्थ्य, वही, पृ. १०३-१०४)

आधुनिक भारत की यह विडंबना ही है कि भाषा की तरह ही स्त्री और दलित के मामले में अभी पूरी तरह आधुनिक नहीं बन पाया है। आजादी के ७५ वर्षों के बाद भी इन तीनों के प्रति भारतीयों में उत्तरदायित्व की भावना पूरी तरह से जागृत नहीं हुई है। यही कारण है कि ये हाशिए पर ढकेल दिए गए हैं। हिंदी साहित्य में दलित और स्त्री से संबंधित विमर्श आज प्रमुख रूप से चर्चा में हैं। डॉ. शर्मा ने दलित विमर्श और स्त्री विमर्श के संबंध में विचार प्रकट किए हैं। उनके अनुसार भारतीय समाज और साहित्य के संदर्भ में दलित विमर्श का अभिप्राय है वर्णाश्रम व्यवस्था अथवा तथाकथित मनुवादी या ब्राह्मणवादी व्यवस्था में अस्पृश्यता, दमन और दलन के शिकार निम्न वर्ण या अंत्यजों की पीड़ा की केंद्रीय विमर्श के रूप में स्वीकृति। और इस दलित विमर्श का ध्येय है जति उन्मूलन। (२६. दलित विमर्श, वही, पृ.१०४)।

डॉ. ऋषभदेव शर्मा ने भारतीय समाज के पीछड़ेपन के कारणों के प्रमुख कारण बेटियों का अर्थात स्त्रियों का अपमान बताया है। इस मामले में देश बदल रहा है किंतु मंजिल अभी दूर है। हम भाषा, दलित और स्त्री के मामले में अभी भी विकासशील देश ही हैं। जिस दिन हम इन तीनों का शत-प्रतिशत सम्मान करने लगेंगे तभी हम सही मयनों में विकसित देश बनने के हकदार होंगे। (अस्तु)

निष्कर्ष- जिस तरह चकमक तो दिखता है किंतु उसमें विद्यमान अग्नि के दर्शन उसके घर्षण से ही संभव है, उसी तरह डॉ. ऋषभदेव शर्मा के साहित्य की विपुलता के आंशिक दर्शन चकमक में आग के अंतर्गत संकलित 'जीवनधारा' और 'ऋषभदेव शर्मा विचार कोश' में होते हैं। जीवनधारा में अंकित डॉ. ऋषभदेव शर्मा का वर्षानुक्रम में जीवन चरित्र और ऋषभदेव शर्मा विचार कोश में संकलित डॉ. शर्मा की वैचारिकता के अंशों से लेखक के जीवन और विचारधारा से रू-ब-रू हुआ जा सकता है। यहाँ संक्षेप में उनका जीवन, जीवनानुभव और उनकी विचारधारा के अंश के दर्शन होते हैं। विचार कोश के उद्धरण न केवल शोधार्थी बल्कि सर्वसामान्य पाठक को भी विवेकवान बनाने में समर्थ हैं। विनम्र निवेदन है कि इसे छोटा मुँह बड़ी बात कहकर टालिए नहीं, बल्कि इस तथ्य की स्वयं पुष्टि करें। 'शोधादर्श' के इस विशेषांक में प्रकाशित खंड चार में 'ऋषभदेव शर्मा विचार कोश' अवश्य पढें। इन उद्धरणों के विस्तृत फलक को देखकर यह कहना कोई अतिशयोक्ति नहीं होनी चाहिए कि डॉ. ऋषभदेव शर्मा के लेखन में अनेकायामी विविधता है। इस कोश को और विस्तार देकर स्वतंत्र रूप से भी प्रकाशित किया जा सकता है।

रम्य रचना ० ऋषभदेव शर्मा

रूपं देहि, जयं देहि

सृष्टि की रचना, स्थिति और संहार के प्रति विस्मित लोक मानस ने विभिन्न समाजों और संस्कृतियों में जिन आद्य रूपों और मिथकों का साक्षात्कार किया, देवी, महामाता या मातृशक्ति उनमें प्रमुख है। हमने इस मातृशक्ति के दर्शन महाकाली, महालक्ष्मी और महासरस्वती के रूप में किए तथा सत्व, रज और तम जैसे गुणों एवं भूत, वर्तमान और भविष्य जैसे कालों को देवी में स्थित, उसी से उत्पन्न और उसी में लय होते देखा। दैनिक जीवन में विविध संबंधों में स्त्री के विविध रूपों में, उसकी विविध भूमिकाओं में देवी का मंगलमय स्वरूप ही तो अभिव्यक्त हो रहा है। इसी से तो 'यत्र नार्यस्तु पूज्यंते रमंते तत्र देवता' जैसी मान्यता विकसित हुई। यह विडंबना ही है कि नारी पूजक यह देश कालांतर में नारीनिंदक बन गया! हम जो लगभग हजार बरस गुलाम रहे उसका कारण यही है कि सिद्धांत रूप में बड़ी-बड़ी बातें करने वाले हम अपने पारिवारिक और सामाजिक जीवन में मनुष्य-मनुष्य में भारी भेद करते रहे हैं जिसके परिणामस्वरूप एक तरफ तो समाज का एक बड़ा हिस्सा विकास की मुख्यधारा से कट गया तथा दूसरी तरफ हमारी आधी दुनिया रसोई और बिस्तर तक सिमट कर रह गई।

नहीं, हम बहक नहीं रहे हैं। अपने मूल विषय पर आ रहे हैं। जिस समाज में नन्हीं सी बच्ची को भी 'अम्मा' और 'इमा' जैसे मातृ वाचक संबोधनों से बुलाया जाता हो, वह समाज मातृहंता कैसे बन गया? जिस समाज ने संपूर्ण प्रकृति को माँ कह पूजा है, वह स्त्री विरोधी कैसे हो गया? नहीं, यह नारीनिंदा, यह स्त्री विरोध, यह मातृहत्या हमारा स्वभाव नहीं है। हम तो नारी शक्ति को ही संपूर्ण जगत् में परिव्याप्त देखने के अभ्यस्त हैं। वही तो है जिसके कारण सुकर्मों के पुण्यफल के रूप में श्री संपदा विराजित होती है, वही तो है जिसके प्रति पाप दृष्टि रखने से दरिद्रता की छाया घेर लेती है, वही तो है जो विवेकशील व्यक्ति के मन-मस्तिष्क का संतुलन बनाती है, वही तो है जो सात्विक वृत्ति वालों के मानस में श्रद्धा बनकर प्रतिष्ठित है, और वही तो है जो कुलशील वालों को लज्जाशीलता और निरभिमानता सिखाती है। अपने विविध रूपों में वही सारे विश्व का पालन करने वाली है, विश्वंभरा है-'या श्रीः स्वयं सुकृतिनां भवनेश्वलक्ष्मीः/पापात्मनां कृतधियां हृदयेषु बुद्धिः।/श्रद्धा सतां कुलजनप्रभवस्य लज्जा/तां त्वां नताः स्म परिपालय देवि विश्वम्।'

मातृशक्ति की यह सर्वव्यापक छवि बराबर हमें प्रेरित करती रहे इसलिए हम बार-बार स्वयं को 'नवरात्र' के बहाने देवी के समक्ष आत्यंतिक रूप में समर्पित करते हैं। देवी सब कुछ देने वाली है - रूप भी, जय भी और यश भी। लेकिन साथ ही वह शत्रुओं का नाश भी करने वाली है। रूप, जय और यश तब तक अधूरे हैं जब तक द्वेष रखने वाली शक्तियों का नाश न हो। यह बात भौतिक जगत में भी उतनी ही सच है जितनी मानसिक और आध्यात्मिक जगत में। इसीलिए हम देवी के उस रूप की आराधना करते हैं जिसमें वह महिषासुर का मर्दन करती है। देवी सिंहवाहिनी है और महिषासुर साक्षात् महिष है - भैंसा। भैंसा भी ऐसा वैसा नहीं : खूनी भैंसा। खुन्नस सवार है उस पर। खुन्नस विवेकहीनता है। खुन्नस प्रभुता का मद है। खुन्नस आतंकवाद है। खुन्नस पाशविक हिंसकता की पराकाष्ठा है - और उसका प्रतीक है भैंसा, महिषासुर। जब तक उसे निर्मूल न किया जाए तब तक रूप, जय और यश किस काम के?

महिषासुर निर्णाशि भक्तानां सुखदे नमः।
रूपं देहि, जयं देहि, यशो देहि, द्विषो जहि।।

सिंहवाहिनी देवी और महिषासुर का द्वंद्व वास्तव में सृष्टि की सकारात्मक और नकारात्मक शक्तियों का द्वंद्व है, सत् और असत् का द्वंद्व है। यह द्वंद्व प्रकाश और तमस के बीच भी है और जीवन और मृत्यु के बीच भी। ऐसे अनेक अवसर उपस्थित होते हैं प्रकाश की इस शाश्वत जययात्रा में कि महिषासुर का भैंसापन जीतता हुआ प्रतीत होता है। लेकिन भैंसापन मूढ़ता भर है और उसकी जीत की गर्जना क्षणिक है। गरज ले गरज ले, मूर्ख भैंसे, उतनी देर भर के लिए गरज ले जितनी देर तक देवी मधुपान कर रही है। मधुपान करके उत्साह का संचार करती हुई देवी जब इस क्षणिक विराम के बाद अविवेक, ईर्ष्या, मद और मोहग्रस्तता के प्रतीक महिषासुर पर वार करेगी तो उसकी सारी माया के जाल को ठीक उस क्षण में काटेगी जब अपनी पाशविकता का, हिंसकता का, असुरता का चरम प्रदर्शन कर रहा होगा।

गर्ज गर्ज क्षणं मूढ़/मधु यावत् पिबाम्यहं।/मया त्वयि हतेअत्रैव/गर्जिष्यंत्याशु देवताः।

महिषासुर मर्दिनी यह देवी वह चरम सत्ता है जो कभी किसी की अधीनता स्वीकार नहीं करती। उसकी घोषणा है कि वही मेरा पति हो सकता है, जो मुझे संग्राम में पराजित कर दे, जो मेरे दर्प को खंडित कर दे, जो मेरा प्रतिबल हो। यह घोषणा साधारण बात नहीं है, प्रतिज्ञा है। इसमें यह अंतिम सत्य विद्यमान है कि मातृशक्ति सर्वोपरि है। उसे कोई संग्राम में पराजित नहीं कर सकता, उसके दर्प को कोई खंडित नहीं कर सकता और न ही कोई उसका प्रतिबल संभव है। वह युद्ध से नहीं, प्रेम से पराजित होती है। उसका दर्प खंडित कर सकता है केवल कंदर्पविजेता ही-कंदर्प यानि कामदेव। कामदेव को जो हरा दे, वही तो देवी का प्रेमपात्र है। उसका प्रतिबल वही हो सकता है जिसका अपना कोई प्रतिबल न हो - जिसमें बल और प्रतिबल अपना द्वंद्व छोड़कर युग्म भाव से रहते हों। भारतीयों ने देवी के ऐसे पति की कल्पना की - अर्धनारीश्वर के रूप में। यह विश्वंभरा अन्नपूर्णा और वह विश्वंभर चिरभिक्षुक। ऐसे युगल की कल्पना शायद ही दुनिया की किसी और सभ्यता या संस्कृति में मिल सके-

'चिता भस्मालेपो गरलमशनं दिक्पटधरो
जटाधारी कण्ठे भुजगपति हारी पशुपतिः।
कपाली भूतेशो भजति जगदीशैकपदवीं
भवानी त्वत्पाणि ग्रहण परिपाटी फलमिदं।।'

मुग्ध हैं शंकराचार्य इस शाश्वत युगल पर। हे भवानी! यह जो शंकर को 'जगदीश' की पदवी मिली हुई है, इसका कारण मेरी समझ में आ गया है। शंकर जी ठहरे श्मसानवासी। अंगों में चिता की राख लपेटने वाले। जटा और कंठ में सांपों के हार धारण करने वाले। हाथ में सदा कपाल का भिक्षापात्र लिए रखने वाले। भूतों के स्वामी। पशुओं के पति। भला ऐसे औघड़बाबा को 'जगदीश्वर' किसने बना दिया? तुमने माँ, तुमने! तुमने मेरे पिता को परमपिता बना दिया। तुमने शंकर का पाणिग्रहण किया तो वे सहज ही भोलेनाथ से विश्वनाथ बन गए। और वह शिव विश्वनाथ होकर भी तेरे सामने आज भी भिखारी है
- 'अन्नपूर्णे सदापूर्णे शंकर प्राणबल्लभे।
ज्ञानवैराग्य सिद्धयर्थं, भिक्षा देहि मे पार्वती।।'

ऋषभदेव शर्मा की तेरह तेवरियाँ

१.

पकने लगी फसल, रीझता किसान

पकने लगी फसल, रीझता किसान
जल्दी पकी फसल, रीझता किसान
ली सेठ ने खरीद, पैसे उछाल कर
खेतों खड़ी फसल, रीझता किसान
कर्जा उतर गया, सिर पर लदा हुआ
अच्छी हुई फसल, रीझता किसान
दो रोटियाँ मिलें, दो वक्त के लिए
कुछ तो बची फसल, रीझता किसान
जो पौध गल गई थी, खाद बन गई
आई नई फसल, रीझता किसान

२.

मार्च आँधी और आँधी जून है

मार्च आँधी और आँधी जून है
कैक्टसी वन, सूखती जैतून है
प्रेम पर पत्थर बरसते मृत्यु तक
यह तुम्हारे देश का कानून है
मुक्ति की चर्चा भला कैसे करें
राजमुद्रांकित हरिक मजमून है
दूध में धुल कर सफेदी में पुते
चेहरे हैं, होंठ पर तो खून है
सत्य कहने की जरा हिम्मत करो!
गरदनों पर बाज का नाखून है

३.

यह समय है झूठ का, अब साँच को मत देख

यह समय है झूठ का, अब साँच को मत देख!
देख मत पंचायतों को, जाँच को मत देख!!
नेपथ्य से नाटक चलाता धूर्त निर्देशक,
तू थिरकती पुतलियों के नाच को मत देख!
हाथ उसके की सफाई को पकड़ना है अगर,
तो लहरती उँगलियों के नाच को मत देख!
आग का दरिया तिरेगी, भूमि की बेटी,
तू नजर उस पार रख, इस आँच को मत देख!
साँस जब तक शेष है, नाचना होगा यहाँ,
पाँव में जो चुभ रहा, उस काँच को मत देख!

४.

यह डगर कठिन है, तलवार दुधारी है

यह डगर कठिन है, तलवार दुधारी है
घात लगा कर बैठा क्रूर शिकारी है
वे भला समर्पण-श्रद्धा क्या पहचानें
उनके हाथों में नफरत की आरी है
ईरान कहें या अफगानिस्तान कहें
घर-बाहर कोड़ों की जद में नारी है
मुट्ठी में ले जिसने आकाश निचोड़ा
कोमल मन लेकर वह सबसे हारी है
आदम के बेटों के पंजे शैतानी
नई सदी की यह त्रासद लाचारी है

५.

राजा सब नंगे होते हैं

राजा सब नंगे होते हैं।
कहने पर पंगे होते हैं।।
शीश झुकाकर जो जय बोलें,
बंदे वे चंगे होते हैं।।
लाज शरम सिखलाने वाले
जेहन के तंगे होते हैं।।
रंग-ढंग का ठेका जिन पर,
वे खुद बेढंगे होते हैं।।
'गला काटने वाले कातिल',
मत कहना, दंगे होते हैं।।

६.

धुंध, कुहासा, सर्द हवाएँ, भीषण चीला हो जाता है

धुंध, कुहासा, सर्द हवाएँ,
भीषण चीला हो जाताहै!
शाकाहारी जबड़े में भी
हिंसक कीला हो जाता है!!
फूलों पर चलने वाले तुम,
कड़ी चोट को क्या जानोगे?
बहुत जोर की ठोकर खाकर,
तन-मन नीला हो जाता है!!
वोट डालते दम तो, भैया,
सब कुछ ठीक-ठाक लगता है,
किंतु नतीजा आते-आते,
ऊटमटीला हो जाता है!!
अपना दल कुर्सी पाए तो,
अपनी मिहनत की माया है।
और जीतना किसी और का,
प्रभु की लीला हो जाता है!!
अगर मेनका नोट लुटा कर
वोट माँगने आ जाए तो!
विश्वामित्रों के चरित्र का
बल भी ढीला हो जाता है!!
इतने बरसों के अनुभव से,
अब तक बस इतना सीखे हैं!
जनता लापरवाह हुई तो,
शासन ढीला हो जाता है!!

७.

दर्द भले कितना ही सहना

दर्द भले कितना ही सहना
झूठों को मत सच्चे कहना
कुर्सी तो आनी जानी है
अपराधी की ओर न रहना
वोटों की खातिर सैंया जी
साँप पालते, सुन री बहना
वे मायावी मगरमच्छ हैं
आँसू में उनके मत बहना
यह जो ताशमहल रचते हो
निश्चित है इसका तो ढहना
लाक्षागृह तो बना रहे हो
पड़े न तुमको इसमें दहना
सुनो, न्याय का शासन केवल
लोकतंत्र का सच्चा गहना

८.

महफिल में जयगान हो रहा लुच्चों का

महफिल में जयगान हो रहा लुच्चों का
अभिनंदन-सम्मान हो रहा लुच्चों का

जनता भूखी बैठी जंतर मंतर पर
मुगलाई जलपान हो रहा लुच्चों का
न्याय माँगने वालों को ठोकर मिलतीं
सत्ता में उत्थान हो रहा लुच्चों का
भुजबल धनबल छलबल की माया पसरी
स्वेच्छा से मतदान हो रहा लुच्चों का
वोट-नोट की पापमोचनी गंगा में
निर्लज कुंभ नहान हो रहा लुच्चों का
प्रश्न पूछने वालों के मुँह सिले गए
विज्ञापन अभियान हो रहा लुच्चों का
नुक्कड़ नुक्कड़ बात चली है गली गली
अनुचर आज विधान हो रहा लुच्चों का

९.
हाँ, सोने के बँगले में, सोते हैं राजाजी

हाँ, सोने के बँगले में, सोते हैं राजाजी
पर, चाँदी के जँगले में, रोते हैं राजाजी
नारद जी लेकर आए हैं खबर बहुत पक्की
धरती पर साकार ब्रह्म, होते हैं राजाजी
श्वेत झूठ की वैतरणी में खूब नहाए हैं
हरिश्चंद्र के कहने को, पोते हैं राजाजी
बहू-बेटियों की इज़्जत से कीचक खेल रहे
कभी न पर अपना संयम, खोते हैं राजाजी
बने धर्म अधिकारी लेकर न्यायदंड स्वर्णिम
सब अपनों के पाप-करम, ढोते हैं राजाजी
वह कबीर वाली चादर मैली कर डाली है
नित्य प्रजा के आँसू से, धोते हैं राजाजी
अध्यादेशों पर नाखूनों से अक्षर लिख कर
लोकतंत्र का जप करते, तोते हैं राजाजी
दान-पुण्य करके चुनाव का अश्वमेध करते
किंतु नाश के बीज स्वयं, बोते हैं राजाजी

१०.
क्यों यह गुंबद बनवाई है बतलाओ मुगले आजम

क्यों यह गुंबद बनवाई है बतलाओ मुगले आजम
किसकी बेटी दफनाई है बतलाओ मुगले आजम
बत्तिस-बत्तिस टुकड़े करके फ्रिज में बर्फ जमाई थी
किस दिवार में चिनवाई है बतलाओ मुगले आजम
राजनीति के गलियारों में उड़ती रूहें पूछ रहीं
लाश कहाँ पर धुनवाई है बतलाओ मुगले आजम
जिसका चीर हरण करके बेखौफ दरिंदे नाच रहे
क्यों ना उसकी सुनवाई है बतलाओ मुगले आजम
शहर शहर जो आग लगी है हर पर्वत हर घाटी में
किसकी खातिर सुलगाई है बतलाओ मुगले आजम
भाग्य विधाता की अर्थी पर डाल रहे जो इज़्जत से
चादर किससे बुनवाई है बतलाओ मुगले आजम

११.
दिल्ली से उठते हैं बादल और हवा में बह जाते हैं

दिल्ली से उठते हैं बादल
और हवा में बह जाते हैं
रेत नहाते हुए परिंदे
गगन ताकते रह जाते हैं
झुलस-झुलस कर एक-एक कर
सारे पीपल ठूँठ हो रहे
भीषण लूओं को ये बरगद
जाने कैसे सह जाते हैं
दरबारों में दीन जनों की
सुनवाई की जगह नहीं है
फिर भी वे कुर्सी के आगे
सिसक-सिसक कर कह जाते हैं
गाँव घेर कर बड़ी हवेली
बड़े चौधरी बना रहे हैं
घास-फूस के छप्पर वाले
घर तो खुद ही ढह जाते हैं
ओझा-गुनी बड़े आए थे
लंबे-चौड़े वादे लेकर
कठिन सवालों के आते ही
यह जाते हैं, वह जाते हैं
अम्मा ने कितना समझाया
मिलकर रहना ही ताकत है
राजनीति के दावानल में
नाजुक रिश्ते दह जाते हैं

१२.
सत्य हुआ सत्ता का अनुचर, हर गंगे

सत्य हुआ सत्ता का अनुचर, हर गंगे
न्याय-व्याय की बातें मत कर, हर गंगे
नेत्र तीसरा बंद पड़ा है, वैसे तो
कंकर-कंकर में है शंकर, हर गंगे
राजधानियाँ भंग चढ़ाकर सोई हैं
खुले घूमते गुंडे-तस्कर, हर गंगे
राहु-केतु का ग्रास बन रही है जनता
पुण्य कमा लो वोट डालकर, हर गंगे
चार सीट दिल्ली की जिसकी मुट्ठी में
बच जाएगा सात खून कर, हर गंगे
अब सड़कों पर मार रहे वे, रौंद रहे
कब तक देखें पत्थर बनकर, हर गंगे
ढहते पुल, भिड़तीं रेलें, चलती गोली
जाँच हो रही, चिंता मत कर, हर गंगे
लोकतंत्र की छाती पर से बूट पहन
गुजर रहा राजा का लश्कर, हर गंगे
खुद लेने प्रतिकार देवियो! अब उतरो
ले जाए ना असुर उठाकर, हर गंगे

१३.
सबका देश समान है, सबका झंडा एक

सबका देश समान है, सबका झंडा एक
सब की धरती एक है, मन की भाषा एक
साथ सभी मिलकर चलें, चलें प्रगति की राह
सबके सपने एक हों, सबकी आशा एक
साथ साथ खाएँ सभी, सब में रोटी बाँट
सबकी भूख समान है, और पिपासा एक
घोल रहे जो कुएँ में, संप्रदाय की भाँग
उन्हें खींच बाजार में, करें तमाशा एक
टोपी, कुर्सी, धर्म से, ऊपर अपना देश
राजनीति के गाल जन, जड़े तमाचा एक
जो नक्शे को नोंचते, काटें वे नाखून
भारतीय सब एक हैं, सबका नक्शा एक
यह अक्षय वट देश का, सके न कोई काट
शीश कटें, कट कट उगें, करें प्रतिज्ञा एक

हैदराबाद । 'शोधादर्श' के 'प्रेम बना रहे' अंक का समर्पण कार्यक्रम (कुछ तस्वीरें)

इक्यावन कविताएँ – एक विवेचन

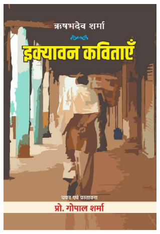

डॉ. सुषमा देवी

कवि ऋषभदेव शर्मा (ज. १९५७) की ‘इक्यावन कविताएँ’ (सं. गोपाल शर्मा, २०२३, कानपुर : साहित्य रत्नाकर) ज्ञान की, अनुभूति की, आक्रोश की, परिवर्तन की तथा शाश्वत मूल्यों की स्थापना हेतु प्रतिबद्ध हैं। इस संग्रह में जितनी भी कविताएँ हैं, वे कुछ अलग कहना चाहती हैं और कवि की रचनाधर्मिता की एक समग्र तथा समेकित छवि प्रस्तुत करने में समर्थ हैं। कवि की रचनाधर्मिता का एक अत्यंत मुखर आयाम समाज-समीक्षा और व्यवस्था विरोध का है। संग्रह की पहली कविता ‘कुत्ता गति’ में कवि ने समकालीन जीवन स्थिति की विषमता का चित्रण कुत्तों के आतंक के सहारे यथार्थ के धरातल पर किया है, तो आगे ‘प्रमाद’ में प्रेम के व्याज से व्यवस्था के दोहरेपन को उजागर किया है – ‘मिट्टी का मिथ्या अभिमान,/तुम्हारी दिव्यता के प्रसाद को/समझ लिया था -प्रेम!’ (पृष्ठ-३५)

‘काव्य को अंगार कर दे, भारती’ शीर्षक तेवरी में कवि ने अपने तीखे तेवर दिखाए हैं। सबके सजग बनने की कामना की है। ‘अब न बालों और गालों की कथा लिखिए’ में वर्तमान परिदृश्य का ऐसा रूप कवि ने उकेरा है, जहाँ हर शब्द चीखते हुए, मानवता की स्थापना की गुहार लगा रहा है। तेवरी ‘कल धमाके में मरा जो, कौन था? पूछा जभी’ सामयिक परिवेश पर आधारित है। साँप और बिच्छू के प्रतीक यहाँ अत्यंत समीचीन है।

‘परी की कहानी’ कविता के द्वारा कवि ने एक साथ कई विडंबनाओं पर चिंता प्रकट की है। वर्तमान परिवेश में सत्ता और आम आदमी के बीच का संबंध हो या फिर भूमंडलीकरण और मध्यम वर्ग की स्थिति की बात अथवा किसी शक्तिशाली देश की विस्तारवादी नीति की बात, कवि की कल्पना परी को उस जगह पर रखती है, जहाँ वह आम आदमी को लुभाती है। जैसे सत्ता में आने से पहले राजनेता लुभाते हैं और आम आदमी को ऐसा लगता है कि वे इंद्रधनुषी आसमान में सैर कर रहे हैं, जो कि वास्तविकता की दुनिया में कभी संभव नहीं हो पाता है। जब तक आम इनसान को समझ आता है, परी उसके पर कुतर चुकी होती है। उसकी भावनाओं, महत्वाकांक्षाओं, जिजीविषा तथा जीने के उत्साह, आशा और आकांक्षा के पर कुतरे जा चुके होते हैं। उदाहरण के लिए, श्रीलंका को एक समय यही लग रहा था कि शीघ्र ही चीन की मदद से वह तरक्की के चरम को छू लेगा, लेकिन चीन की ही ‘कृपा’ से रसातल में पहुँच गया। हमारे देश में मुफ्तखोरी की जो आदत जनता को लग रही है, उसके पीछे-पीछे आने वाले समय में स्थितियों की भयावहता की कल्पना भी नहीं की जा सकती। ‘डॉ. सुपर्णा’ के द्वारा देश में व्याप्त आर्थिक असंतुलन को चित्रित किया गया है, तो ‘कंगारू’ और ‘गलगोड्डा’ जैसी कविताओं में कवि ने सभ्यता की राह में अवरोधक बने लोगों की खबर ली है। ‘चिनार’ कविता के छोटे से आकार में कवि ने प्रतिरोध और विद्रोह के स्वर फूँके हैं। लगता है, चिनार के पत्तों के पाँच कोने मानव की कर्मशील पाँच उँगलियों के प्रतीक बन गए हैं। ‘सूरज होने का दर्द’ एक दृष्टि में सूरज की आपबीती-सी प्रतीत होती है, तो दूसरे ही क्षण हर उस व्यक्ति की पीड़ा व्यक्त करती है, जो संघर्षों के लावे में जलकर जीवन की ऊँचाई को छू सका है। एक अंश देखें- ‘सूरज है!/यों अपनी पीड़ा/ कहाँ-कभी-किससे कहता है?/सारे-सारे दिन दहता है।’ (पृष्ठ-७७)

‘कपाल-स्फोट : भूख और कुर्सी’ कविता में कवि ने राजनीति के क्रूर पाश में जकड़ी कुर्सी के वीभत्स चेहरे को दिखाने का प्रयत्न किया है। इसके लिए ‘कथा सरित्सागर’ की एक प्रेत-कथा का सटीक इस्तेमाल पाठक को चकित भी करता है और रोमांचित भी। राजनीति के प्रति अपनी जुगुप्सा को कवि इन पंक्तियों में अभिव्यक्त करते हैं- ‘तुम्हारा/इतना ही महत्व है कि मुझे/तुम्हारे कपाल के लहू से/कुर्सी की नींव सींचनी है।’ (पृष्ठ-७९)

कवि समाज के हर उस पक्ष के ऑपरेशन में लगे हुए हैं, जिससे सामाजिकता और मानवता को हानि पहुँचती है।

‘नर पिशाच’ कविता में क्रूरता के उस रूप का चित्रण किया गया है, जहाँ दूसरों के अस्तित्व को मिटा कर व्यवस्था के मालिक सदा शोषण के लिए तत्पर रहते हैं। शोषण की ऐसी स्थितियों को इन पंक्तियों में देखा जा सकता है- ‘रक्तपान कर/मैं/बन गया हूँ पिशाच/लटका अंधकूप में उल्टा/अब शव- भक्षण की बारी है।’ (पृष्ठ-८६)

‘चर्वणा’ कविता में भी शोषकों की विद्रूपता को कवि रेखांकित करते हैं। ‘अतिवादी की चुप्पी’ कविता मानव की अधिकार-लिप्सा की उस प्रवृत्ति को प्रदर्शित करती है, जो उसे क्रूर और हिंसक तक बना देती है। ‘कापालिक बंधु के प्रति’ कविता में कवि आत्मनिर्वासन और अकेलेपन से जूझती नई पीढ़ी को काल्पनिकता के संसार से निकलकर यथार्थ की दुनिया में आने के लिए बुलाते हैं। वे जीवन मूल्यों की पुनर्प्रतिष्ठा की आकांक्षा में घर, परिवार, मित्रता, प्यार, समाज और संसार में लौटने की गुहार लगाते हैं। वे कहते हैं- ‘तुम घेर लिए गए हो अकेले।/अकेले मारे जाओगे/धतूरे के इस जंगल में/यों....आओ....लौट आओ.../घर में.... परिवार में.../समाज में ....संबंधों में .../लौटो,/लौट आओ कापालिक बंधु’ (पृष्ठ-९६)

‘धर्मयुद्ध जारी है’ कविता में धर्मांधता के नग्न नृत्य को कवि चित्रित करते हैं। धर्म के नाम पर पाखंड करने वालों को लताड़ते हुए कवि उनकी खबर लेते हैं। ‘नस्ल के युद्ध हैं’ कविता में कवि ने रंग, धर्म, जाति-भेद करने वालों को फटकार लगाई है। कवि ने इसमें पेट को देश से बड़ा मानकर उस अंधकूप को भरने वालों की स्थिति का चित्रण किया है। ‘मारणास्त्र’ कविता में युद्धोन्मादी संस्कृति के पोषक उन सभी को आड़े हाथों लिया है, जो भावी समाज के विनाशक बने हुए हैं। अपने-अपने उन्माद में वे देश, मानव विकास के सहस्रों वर्षों के क्रम को मटियामेट करने पर तुले हैं।

वर्तमान युग में समझौतों, संविदाओं का इतना बोलबाला है कि मानव राजनीति, धर्म और रिश्ते की गहराई को विस्मृत करते जा रहे हैं। ‘अवशेष’ कविता में यही द्रष्टव्य है। ‘बहरापन : पाँच स्थितियाँ’ कविता में कवि यथार्थ के धरातल पर विविध स्थितियों का जायजा लेते हैं। संसद में जनप्रतिनिधि, सड़क पर जनता, कार्यालय में सत्ताधीश सभी बहरेपन का नाटक कर रहे हैं, तो कवि भी ललकारते हुए गलत के विरुद्ध अपनी आवाज बुलंद करते हुए कहते हैं, यदि अपनी इंद्रियों का सही प्रयोग सही स्थान पर और सही समय पर किया तो ही मानव जाति की रक्षा संभव है। अन्यथा–

‘धूल, धुआँ, गुब्बार/तेजाब ही तेजाब/रेडियोधर्मी विकिरण/तपता हुआ ब्रह्मांड का गोला/फटने लगे हैं/अंतरिक्ष के कानों के परदे,/चीखती है निर्वसना प्रकृति/...और.../दिशाएँ बहरी हैं !’ (पृष्ठ-१२४)

‘गोलमहल’ कविता कई प्रतिमानों को समेटे हुए हैं। शासन तंत्र, नौकरशाही, शिक्षा तथा आम आदमी के जीवन को कवि शब्दों के पर्दे में रखकर परोसते हैं। इस स्थिति से निजात तो तभी मिलेगी जब- ‘इसको दफन करें मिट्टी में/बन जाने दें- खाद!’ (पृष्ठ-१२५)

‘मूर्तिपूजकों से’ कविता के द्वारा भाव बिना भजन करने वालों से कवि कहते हैं-‘मैं अकेला हूँ/कोई मुझे पहचानता तक नहीं/ ...../सब पूजते हैं प्रतिमाओं को/मुझे कोई नहीं।’ (पृष्ठ-११६)

‘अनुपस्थित’ कविता में धरती का स्वर्ग कहे जाने वाले कश्मीर के स्थिति चित्रण को सहजतापूर्वक प्रस्तुत किया गया है।

उल्लेखनीय है कि कवि ऋषभदेव शर्मा को प्रबल स्त्रीपक्षीय साहित्यकार के रूप में भी जाना जाता है। संग्रह की ‘मुझे पंख दोगे?’ कविता के माध्यम से स्त्री की स्थिति को व्यक्त किया गया है। कविता की इस पंक्ति में स्त्री विमर्श के यथार्थ स्वरूप को देखा जा सकता है- ‘कल मैंने धरती माँगी थी,/मुझे समाधि मिली थी,/आज मैं आकाश माँगती हूँ,/मुझे पंख दोगे?’ (पृष्ठ-३८)

‘हे अग्नि’ कविता में कवि ने अपनी दार्शनिकता से भरी हुई विचारधारा का परिचय दिया है। कवि स्त्री-शक्ति का आवाहन करते हुए कहते हैं-‘जागो, आज फिर, खांडवप्रस्थ फैला है दूर-दूर/डँसता है प्रकाश की किरणों को, फैलाता है अँधेरे का जाल/ उगलता है भ्रम की छायाओं को।’ (पृष्ठ-४०)

कवि ऋषभदेव शर्मा स्त्री के मानवी स्वरूप की स्थापना हेतु सदैव आकुल दिखाई देते हैं। ‘औरतें औरतें नहीं हैं’ कविता में स्त्री के जीवन के जुगुप्सक क्षणों को चित्रित करते हुए कवि उन्हें देश, जाति तथा राष्ट्र के समान कल्पित करते हैं, तभी तो वे कहते हैं- ‘औरतें देश होती हैं/औरतें होती हैं जाति,/औरत राष्ट्र होती है।’ (पृष्ठ-४६)

वे उन्हें सभ्यता, संस्कृति से भी आगे देवत्व का प्रतीक मानते हुए मनु के ‘यत्र नार्यस्तु पूज्यंते’ की विचारधारा को पुनः प्रतिष्ठापित करते हैं। इसलिए उन्होंने औरतों की हार को मानवता की हार माना है।

‘गुड़िया-गाय-गुलाम’ कविता स्त्रियों के शोषित जीवन की तीन स्थितियों को स्पष्ट करती है,जो बचपन से शुरू होकर जीवनपर्यंत चलती रहती हैं। कवि का मानना है कि जब तक वे स्वयं इसके विरुद्ध सजग होकर आवाज नहीं उठाएँगी, यह सब चलता रहेगा। ‘स्वेच्छाचार’ कविता में कवि ने स्त्री के सशक्त रूप से डरे समाज के तथाकथित सुधारकों के मुखौटे उतारने का प्रयत्न किया है। कवि ने उस सशक्त स्त्री को मीरा और राधा में स्पष्ट देखा है। ‘लाज न आवत आपको’ में कवि ने तुलसीदास के जीवन की घटना के बहाने पुरुष की आदिम प्रवृत्ति की बखिया उधेड़ी है। कवि दुनिया भर की स्त्रियों से एक साथ अपने अधिकारों के लिए सामने आने के लिए कहते हैं। ‘अश्लील है तुम्हारा पौरुष’ में कवि कहते हैं- ‘अश्लील हैं वे सब रीतियाँ/जो मनुष्य और मनुष्य के बीच भेद करती हैं/अश्लील हैं वे सब किताबें/जो औरत को गुलाम बनाती हैं/और मर्द को मालिक/नियंता।’ (पृष्ठ-५६)

‘कई नाम दिए उन्होंने मुझे’ में भी माँ, बहन, पत्नी, बेटी तथा अंत में वेश्या नाम देकर हर रूप में स्त्री की उपेक्षा करते हुए उन्हें भोगने की प्रवृत्ति को कवि लानत भेजते हैं। ‘गाड़ियां लुहारिन का प्रेमगीत’ कविता पितृसत्ता की विचारधारा के पोषकों पर कटाक्ष के रूप में प्रस्तुत है। कविता के अंत में रांगेय राघव की कहानी ‘गदल’ की हल्की सी गूँज सुनी जा सकती है। ‘सहृदय’ में कवि ने कविता के रूपक के सहारे स्त्री की योग्यता की उपेक्षा करने वालों को जासूस, जज और जल्लाद की संज्ञा के अभिहित किया है। इसी प्रकार ‘चूहे की मौत’ कविता में चूहे और एक स्त्री के जीवन की साम्यता को देखा जा सकता है। दूसरी ओर कविता नौकरशाही की ओर भी विचारवीथिका को खोलती है। कवि की अभिव्यक्ति संश्लिष्ट तथा अनुभूति अत्यंत गंभीर एवं गहनता से परिपूर्ण है।

समकालीन सरोकारों और स्त्री प्रश्नों से जूझने के साथ ही ऋषभदेव शर्मा कोमल मनोभावों और मार्मिक प्रेमानुभूति के चितेरे के रूप में भी प्रतिष्ठित हैं। विद्रूप ही नहीं, सौंदर्य और औदात्य को भी उन्होंने सार्थक अभिव्यक्ति प्रदान की है। इस लिहाज से ‘स्पर्श’ कवि की अति संवेदनशीलता को अभिव्यक्त करती हुई कविता है। यह कविता स्पर्श के बारे में उतनी नहीं, जितनी अ-स्पर्श के बारे में हैय मन के अनछुए रह जाने के बारे में है- ‘बहुत छूता था तुम्हें मैं पहले/और सोचता था/ तुम पुलकित हो रहे होगे।/ पर उस दिन/ तुम्हारे/ रोष की रोशनी में/दिखाई दिए मुझे/तुम्हारी त्वचा पर पड़े हुए/असंख्य नीले निशान!/तो क्या/इतने दिनों मैं/तुम्हारी केवल त्वचा छूता रहा,/तुम्हें/एक बार भी नहीं छू सका?’ (पृष्ठ ८०)

इसी तरह ‘पछतावा’ कविता में दांपत्य जीवन में संवाद के महत्व को निरूपित किया गया है, तो ‘निवेदन’ में कवि ने स्त्री-पुरुष संबंधों की बड़ी सुंदर झाँकी प्राकृतिक उपादानों का सहारा लेते हुए प्रस्तुत की है और प्रेम को आध्यात्मिक औदात्य प्रदान किया है।

‘विस्मरण’ कविता में कवि ने माता और संतान के मध्य मार्मिक संबंधों को उकेरा है। जीवन की भाग-दौड़ में मानव कितना विवश होता जा रहा है! ‘माँ अंतिम क्षण की प्रतीक्षा में थी/ मुझे ट्रेन पकड़नी थी’(पृष्ठ-१३२) काव्यांश पूरी कविता की आत्मा बन जाता है। यह इस संग्रह की सबसे मार्मिक कविता है। इसी के साथ, ‘मृत्यु आती है’ कविता को पढ़कर एकबारगी ‘अज्ञेय’ की कविता ‘नदी के द्वीप’ का स्मरण हो आता है। कवि मृत्यु का स्वागत एवं आह्वान करते हुए उसे मुक्तिदाता के रूप में संबोधित करते हैं। मृत्यु को माँ के रूप में कल्पित करना, भारतीय आध्यात्मिकता की अनुभूति कराता है।

कवि का जीवन दर्शन भी इस संग्रह कविताओं में अनेक स्थलों पर झलकता है। छोटी कविता ‘क्षणिक’ के द्वारा कवि ने जीवन की नश्वरता को बिजली की कौंध के रूपक में बाँधा है। ‘बुद्ध’ के द्वारा बुद्धत्व की अभिलाषा करते हुए कवि कहते हैं- ‘सभी के दुख दर्द के साक्षी/एक बूढ़े वटवृक्ष की छाँह में/किसी कृषकबाला के परोसे अन्न में/निर्वाण के सूत्र ढूँढ़ते हैं/अपनी पहचान ढूँढ़ते हैं/सत्य का दर्शन करते हैं/और नई लीक खींचते हैं/मनुष्य की मुक्ति के पथ में।’ (पृष्ठ-४५)

‘दुआ’ कविता के द्वारा स्वयं के होने की सार्थकता की आकांक्षा प्रकट की गई है, तो ‘भाषाहीन’ कविता में अपनी आत्मा की आवाज पर चलने की प्रेरणा दी गई है। स्वयं से दूर मानव सब प्राप्त कर लेने की भाग-दौड़ में भटकता जा रहा है। कवि कहते हैं- ‘भटक रही हूँ बदहवास आवाजों के जंगल में/मुझे भूलनी होंगी सारी भाषाएँ/पिता का खत पढ़ने की खातिर।’ (पृष्ठ-१२२)

‘घर बसे हैं’ कविता एकबारगी ‘बच्चन’ की कविता ‘नीड़ का निर्माण फिर-फिर’ को स्मृति में ला देता है। घर का अस्तित्व मानव समाज के विकास क्रम में आदिम युग से रहा है। वर्तमान समाज में घर-परिवार के बदलते अर्थ घर को बसने से नहीं रोक सकेंगे। ये घर पत्थर, तंबू, शीशमहल, झोंपड़ी, छप्पर और न जाने कितने रूपों में मानव के सपने को पालते हैं। घर टूटते-बिखरते, स्वयं को सहेजते हुए अपने अस्तित्व को सार्थकता प्रदान करते हैं। कवि का मानना है कि- ‘आपसी सद्भाव, माँ की/ मुट्ठियों में/घर कसे हैं,/क्यों भला अचरज/ कि अब तक/घर बसे हैं,/घर बचे हैं !’ (पृष्ठ-११५)

‘स्वागत नव वर्ष!’ में कवि ने भारतीयों को अपनी संस्कृति से जुड़े रहने की प्रेरणा दी है। अन्य संस्कृति को अपनाने से कवि को कोई परहेज नहीं है, किंतु अपनी संस्कृति की तार्किक उपादेयता की उपेक्षा करने वालों के लिए यह कविता कवि की मीठी झिड़की-सी प्रतीत होती है।

कवि ऋषभदेव शर्मा की कविताओं में जिजीविषा, जूझ और चुनौती के सकारात्मक स्वर खूब ऊँची तान में सुनाई पड़ते हैं। बहुत बार तो कवि का निजी व्यक्तित्व उनके कृतित्व को अनुप्राणित करता दिखाई देता है। ‘सूँ-साँ माणस गंध’ कविता में कवि एक जिम्मेदार कर्मयोद्धा की तरह काल को चुनौती देते हुए से प्रतीत

होते हैं। उन्हें स्वयं के अभिमन्युपन की अनुभूति है, फिर भी व्यवस्था की सड़ांध को कवि चक्रव्यूह मानकर भेदने हेतु तत्पर हैं। जो लोकतंत्र और न्याय की हत्या करें, कवि उन सबके विरुद्ध दृढ़ता के साथ खड़े हैं। वे कहते हैं- ‘प्रासंगिक है तो केवल/तुम्हारा आसुरी उन्माद/
प्रभुओं की नपुंसकता/और मेरी अभिमन्युपन की/शाश्वत माणस गंध!!’ (पृष्ठ-८२)

इसी तरह ‘ओ मेरे महाप्रभुओ!’ कविता में जाति, धर्म, वर्ग के नाम पर अमानवीयता का तांडव करने वालों को खुली चुनौती देते हुए कवि जन-जन को संप्रभु बनकर ऐसे मानव समाज की सर्जना करने की प्रेरणा देते हैं, जहाँ वे कहते हैं- ‘सभी महाप्रभु खाली कर दें मेरी धरती,/मुझे उगाना है एक जातिहीन मनुष्य../धर्मों से परे!’ (पृष्ठ-१३५)

- मेरी दृष्टि में, यही इस कविता संग्रह का मनुष्यता के हक में सर्वाधिक प्रासंगिक संदेश है। लगता है कि कवि ऋषभदेव शर्मा हर स्थिति में हर किसी से बतियाने के लिए तत्पर हैं, फिर चाहे वह आम हो या खास। साथ ही, यह कहना भी जरूरी है कि इस काव्य संग्रह की प्रत्येक कविता का चयन संपादन कला की प्रशंसा करने पर विवश कर देता है। निस्संदेह, इस संग्रह की प्रत्येक कविता पाठकों की विचार-वल्लिका को पुष्ट करने में सहायक होगी।

- डॉ सुषमा देवी

भवंस विवेकानंद कॉलेज, सिकंदराबाद, तेलंगाना -५०००६४

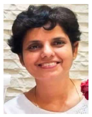

डॉ. अनीता शुक्ल

‘तेवरी’ काव्यान्दोलन की चालीसवीं वर्षगांठ पर..

‘तेवरी’ काव्यांदोलन की चालीसवीं वर्षगाँठ के उपलक्ष्य में १७ जनवरी २०२२ को ‘तेवरी संगीत समारोह’ का आयोजन किया गया था और मुझे उद्घाटकीय भूमिका के निर्वाह का दायित्व सौंपा गया था। इस अवसर पर परम आदरणीय प्रो. ऋषभदेव शर्मा जी के महत्त्वपूर्ण तेवरी संग्रह ‘धूप ने कविता लिखी है’ पर मुझे दो शब्द कहने का अवसर प्रदान किया गया।

जब डॉ. बालाजी ने मुझसे बात की और बताया कि तेवरी काव्यांदोलन के ४० वर्ष पूरे होने पर तेवरी संगीत समारोह का आयोजन किया जा रहा है, तो मेरे मन में सबसे पहला प्रश्न आया कि ‘किसी भी बिंदु पर असहज कर देने वाले सवालों के दायरे निर्मित करके अपने भीतर खींच लेने वाली ‘धूप ने कविता लिखी है’ की तेवरियाँ, जैसा कि प्रो. देवराज जी भूमिका में लिखते हैं, किस राग में बँधेंगी? मैंने आल्हा सुना है। मेरी दादी बताती थीं कि कई बार आल्हा मंडलियाँ जब आल्हा गा रही होती थीं तो सुनने वालों की भुजाएँ फड़क उठती थीं, लाठियाँ उठ जाती थीं। आल्हा वीर रस का छंद है। योद्धाओं का उत्साह बढ़ाने में समर्थ। ‘तेवरी’ असंतोष से उपजे आक्रोश का स्वर है। जब मैं यह तेवरी पढ़ती हूँ- जब नसों में पीढ़ियों की हिम समाता है।/शब्द ऐसे ही समय तो काम आता है।

तब मुझे बरबस ही माखनलाल चतुर्वेदी की ये पंक्तियाँ स्मरण हो आती हैं- रक्त है या है नसों में क्षुद्र पानी। मैं माखनलाल चतुर्वेदी का क्रोध और झुँझलाहट अनुभव कर पाती हूँ इन तेवरियों में, अपनी युवा पीढ़ी की नसों में रक्त के बदले पानी बहते देख कवि आगबबूला हो उठता है और उसे जाँचने को कहता है। यहाँ तो पानी बर्फ बन गया है। निश्चित रूप से धूप के अक्षर ही उसे पिघला पाएँगे।

ये तेवरियाँ काव्यांदोलनों के इतिहास का हिस्सा अभी तक भले ही न बन पायी हों, और बहुत स्वाभाविक है क्योंकि जमी हुई बर्फ पिघलने में समय लगता हैय किंतु काव्यांदोलनों का इतिहास इसे दर्ज अवश्य करेगा, ऐसा मेरा विश्वास है।

जिस प्रकार कवि के भावों के साथ साधारणीकरण होने के लिए भावक का ‘सहृदय’ होना एक बड़ी शर्त है, उसी प्रकार इन तेवरियों को पढ़ने वालों के लिए भी ‘धूप ने कविता लिखी है’ (ऋषभदेव शर्मा) काव्य-संग्रह की भूमिका में प्रो. देवराज कुछ शर्तों और योग्यताओं की बात करते हैं। उनमें सबसे महत्त्वपूर्ण है- ‘पाठक की रीढ़ की हड्डी का सीधी होना।’ मुझे प्रो. शर्मा जी की लिखी हुई तेवरियाँ बहुत प्रिय हैं। इनके तेवरों का फलक व्यापक है। कबीर से लेकर दिनकर तक की सारी ऊष्मा इनके एक-एक अक्षर में धूप बनकर चमक रही है।

स्वतंत्र भारत के पहले गणतंत्र दिवस पर राष्ट्रीय कवि रामधारी सिंह दिनकर ने कविता लिखी- ‘जनतंत्र का जन्म’। बहुत बड़ा प्रश्न है कि मेरे उन पुरखों ने जो सपने देखे थे कि अब देश के सिंहासन पर जनता का राज होगा- ‘सदियों की ठंडी-बुझी राख सुगबुगा उठी,/मिट्टी सोने का ताज पहन इठलाती है,/दो राह, समय के रथ का घर्घर नाद सुनो,/सिंहासन खाली करो कि जनता आती है।

वह प्रश्न आज तक भी उत्तर न पा सका। समय का रथ अपनी गति से चलता रहा लेकिन प्रजा के अभिषेक का सपना सपना ही रहा, फावड़े और हल राजदण्ड बनने का गौरव नहीं प्राप्त कर सके। २६ जनवरी १६५० ई. को लिखी इस कविता के कवि ने जो मिट्टी को सोने का ताज पहनाने के सपने देखे थे, वे राजपथों के कोलाहल में धूसर बन उड़ते रहे। तब संघर्षशील तत्त्वों की लड़ाकू मुद्रा ने रचनात्मक क्रांति अख्तियार किया, त्योरियाँ चढ़ीं, भृकुटियाँ तनी, माथे पर बल पड़े, कविता के तेवर बदले और ‘तेवरी’ बनी-

राजपथों पर कोलाहल है, संविधान की वर्षगाँठ है,
गली-गली में घोर गरल है, संविधान की वर्षगाँठ है।

कविता क्रांति गढ़े, संगीत में आग बहे, यह इस समय की भी आवश्यकता है। हिंदी काव्यांदोलनों के क्रम में ‘तेवरी काव्यांदोलन’ एक ऐसा आंदोलन है जो मुंशी प्रेमचंद के इन शब्दों को प्रत्यक्ष करता है- “साहित्यकार का लक्ष्य केवल महफिल सजाना और मनोरंजन का सामान जुटाना नहीं है- उसका दरजा इतना न गिराइए। वह देशभक्ति और राजनीति के पीछे चलने वाली सच्चाई भी नहीं, बल्कि उनके आगे मशाल दिखाती हुई चलने वाली सच्चाई है।” ‘तेवरी’ मशाल भी है और कबीर की ‘लुकाठी’ भी।

७०-८० के दशक में दुष्यंत कुमार ने अपनी गजलों से सामाजिक और राजनीतिक विसंगतियों पर प्रहार किया। आपातकाल के विरोध में जन्मी ‘तेवरी’ दुष्यंत कुमार के कथ्य को आगे बढ़ाती है और धूमिल और नागार्जुन से प्रेरणा ले आगे बढ़ती है। जून १६८२ ई. में इस आंदोलन की आधिकारिक घोषणा होती है, और फिर- छंद- छंद गीत का प्रान हो गया/शब्द शब्द अग्नि का बान हो गया।(धूप ने कविता लिखी है)

‘तेवरी’ काव्य का नया तेवर है, जिसकी सादगी ही उसका अलंकार है। ऋषभदेव शर्मा की तेवरियाँ सोते हुओं को जगाती हैं, अंधेरे में भटकती पीढ़ियों को राह दिखाने वाला ध्रुव तारा बनती हैं, कदम-कदम पर नए प्रतिमान गढ़ती हैं- गीत हैं मेरे सभी उनको सुनाने के लिए/तेवरी मेरी सभी तुमको जगाने के लिए।

यहाँ लेखनी की नोंक पर ज्वालामुखी धारणकर कवि पसीने से श्रम का सौंदर्य लिखता है, देश का असली पता लिखता है, बड़ी सरलता से नागों को कीलने के मंसूबे लिखता है, बंधुता और एकता लिखता है-

लोग नक्शे के निरंतर कर रहे टुकड़े
इसलिए यदि लिख सकें, तो एकता लिखिए।

या फिर-

धुंध है घर में उजाला लाइए
रोशनी का इक दुशाला लाइए

*** ***

केंचुओं की भीड़ आँगन में बढ़ी
आदमी अब रीढ़ वाला लाइए।

असंतोषजन्य आक्रोश ‘तेवरी’ का प्राण है। युग जीवन को अपने में समेटे संघर्षशील संस्कृति की स्थापना करने के उद्देश्य से जन्मी ‘तेवरी’ काव्य-विधा के रूप में वह मशाल है जो अपनी राह स्वयं रोशन करती है।

-हिन्दी विभाग, महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय बड़ौदा।

उमा न कछु कपि कै अधिकाई

प्रवीण प्रणव

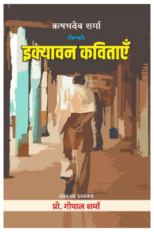

कुछ दिनों पहले प्रो. ऋषभदेव शर्मा (ज. १९५७) की चुनिंदा इक्यावन कविताओं का अनुवाद प्रो. गोपाल शर्मा ने किया और यह संकलन 'In Other Words' (२०२१ : दिल्ली : यश पब्लिकेशन्स) के नाम से प्रकाशित हुआ था। ऋषभदेव शर्मा के विभिन्न कविता संग्रहों से ली गई इन इक्यावन कविताओं को हिंदी में भी 'इक्यावन कविताएँ' (२०२३य कानपुर : सहित्य रत्नाकर) नाम से प्रकाशित किया गया है। 'In Other Words' के बाद इस संकलन में शामिल कविताओं को हिंदी में 'इक्यावन कविताएँ' के नाम से प्रकाशित करने की आवश्यकता पर प्रश्न किया जा सकता है, लेकिन दो वजहों से यह महत्वपूर्ण है। पहली तो यह कि इसके अभाव में हिंदी के पाठक जो अंग्रेजी में उतने प्रवीण न हों, प्रो. गोपाल शर्मा द्वारा चुनी गई कविताओं का रसास्वादन नहीं कर पाते और न ही उस विस्तृत और विचारपूर्ण आलेख से परिचित हो पाते जिसे संपादक ने बड़े मनोयोग से 'In Other Words' किताब के 'Description' में लिखा है। हालाँकि इसमें एक समस्या भी है। आजकल के गायक जो पहले से बनी-बनाई धुनों पर गाना गाते हैं, वे हर बार किसी गाने को एक ही तरह से गाएँगे, लेकिन यदि कोई शास्त्रीय संगीत का उस्ताद हो और उसे आप एक ही राग में अलग-अलग समय गाने को कहें तो हर बार गाने के आलाप और तान अलग मिलेंगे। यही उनकी संगीत में महारत का परिचायक है। प्रो. गोपाल शर्मा भी जब अपने ही लिखे 'Description' का 'इक्यावन कविताएँ' के लिए अनुवाद कर 'प्रस्तावना' लिखते हैं, तो यह शाब्दिक अनुवाद नहीं होता। इन दोनों का राग एक ही है लेकिन आलाप में अंतर है। 'In Other Words' के 'Description' में अनुवादक, अपने पाठकों के लिए विस्तार से इन कविताओं की चयन-प्रक्रिया के बारे में बताते हैं। इसमें अनुवादक की आतुरता दिखती है जहाँ वे अपने अनुवाद को पाठकों तक जल्द से जल्द पहुँचाना चाहते हैं। हिंदी की 'इक्यावन कविताएँ' की 'प्रस्तावना' तक आते-आते यह आतुरता कम होती दिखती है, शायद इसलिए भी कि यहाँ कविताएँ कवि की मौलिक रचना के रूप में उपस्थित हैं। एक विषय, जो हिंदी और अंग्रेजी दोनों ही लेखों में विद्यमान है, वह है प्रो. ऋषभदेव शर्मा की कविताओं में उपस्थित विभिन्न और महत्वपूर्ण तत्वों का विवेचन। हिंदी के पाठक जो ऋषभदेव शर्मा की कविताओं के लंबे समय से प्रशंसक हों या इस अंग्रेजी अनुवाद के माध्यम से इन कविताओं से पहली बार परिचित होनेवाले पाठक, दोनों के लिए यह 'Description' या 'प्रस्तावना' रोचक है, ज्ञानवर्धक है और अनिवार्य रूप से पठनीय है।

'In Other Words' में शामिल कविताओं के 'इक्यावन कविताएँ' के रूप में सामने आने की दूसरी वजह अधिक महत्वपूर्ण है। गीता का श्लोक है "वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि। तथा शरीराणि विहाय जीर्णा-न्यन्यानि संयाति नवानि देही।।" अर्थात जैसे मनुष्य पुराने वस्त्रों को त्यागकर दूसरे नए वस्त्रों को ग्रहण करता है, वैसे ही जीवात्मा पुराने शरीरों को त्यागकर दूसरे नए शरीरों को प्राप्त होता है। यहाँ समस्या यह है कि आत्मा तो वही है लेकिन शरीर बदल जाने के कारण एक आम इंसान उस आत्मा को पहचाने कैसे? यदि कोई विशेष शक्ति हासिल हो या मनुष्य भूत-भविष्य देखने की ताकत रखता हो जिसके लिए गोस्वामी जी ने लिखा 'तुम्ह त्रिकाल दरसी मुनिनाथा', वैसे ज्ञानी लोग तो नए शरीर में भी आत्मा को पहचान लेंगे लेकिन औरों का क्या होगा? प्रो. गोपाल शर्मा ने इन कविताओं का जो अनुवाद किया है, वह शाब्दिक अनुवाद भर नहीं है। उन्होंने कविता का भाव तो वही रखा है लेकिन शब्द उनके अपने हैं। यही वजह है कि इस नए शरीर में मेरे जैसे पाठक, जो ऋषभदेव शर्मा की हर कविता से परिचित हैं, को भी इस शरीर की आत्मा को पहचानने में समय लगता है। ऐसे में 'इक्यावन कविताएँ' नाम से यह संग्रह 'सोऽहं' को चरितार्थ करता हुआ कहता है कि ये आत्मा और शरीर एक ही हैं, इनमें कोई विभेद नहीं।

एक सवाल यह भी मन में आया कि इक्यावन कविताएँ ही क्यों? और फिर यह भी याद आया कि सनातन में सवाये का बहुत महत्व है। हम दर्शन में पूर्ण को शून्य के बराबर मानते हैं। जैसे ही पूर्णता आती है, शून्य वहीं आकर खड़ा हो जाता है। संभवतः यही कारण है कि किलो-दो किलो सब्जी लेने के बाद मुफ्त में धनिया या मिर्च लेने का चलन है या लीटर-दो लीटर दूध देने के बाद दूध वाला थोड़ा दूध और डालता है। यहाँ सवाये का अर्थ है पूर्ण से ज्यादा। इस संग्रह की इक्यावन कविताएँ इस संग्रह को पूर्ण से कुछ ज्यादा बनाती हैं।

इस तथ्य से तो हम सभी अवगत हैं कि ऋषभदेव शर्मा 'तेवरी' काव्य-आंदोलन के प्रवर्तकों में से एक हैं। तेवरी को परिभाषित करते हुए प्रो. गोपाल शर्मा लिखते हैं, "तेवरी सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक और कई अन्य कारकों के कारण असंतोष से पैदा हुए क्रोध की अभिव्यक्ति है। अच्छी तरह से तैयार की गई हर तेवरी प्रतिरोध का प्रत्यक्ष रूप है, चिरस्थायी मधुरता के साथ तेज और तीखी।" लेकिन ऋषभदेव शर्मा का कविकर्म बस तेवरी ही नहीं है इसलिए इनकी कविताओं के बारे में लिखते हैं, "ऋषभ की कविता के पैलेट में अध्यात्म, राजनीति, लोकतंत्र, प्रेम, पीड़ा, अलगाव, पौराणिक कथा, सामाजिक असमानता, महिला सशक्तीकरण और पितृसत्तात्मक उत्पीड़न सभी रंग हैं। तेवरी की शब्दावली से तो पूर्ण कवि का केवल एक हिस्सा दिखता है। दूसरा हिस्सा जो उन्हें परिपूर्ण करता है वह सौंदर्य की उपासना का है, जिसमें प्रेम की मधुर तान और लालसा की तीव्र धुन शामिल है।" एक तरफ ऋषभदेव शर्मा का विशाल कविकर्म और दूसरी तरफ इस सरल, सहज लेकिन गूढ़ परिभाषा को पढ़ते हुए ऐसा लगता है जैसे किसी ने "आदौ रामतपोवनादि गमनं, हत्वा मृगं कांचनं।/ वैदेहीहरणं जटायुमरणं, सुग्रीवसंभाषणं।।/ बालीनिग्रहणं समुद्रतरणं, लंकापुरीदाहनं।/पश्चाद् रावण कुम्भकर्ण हननं, एतद्धि रामायणं।।" कहकर एक श्लोक में संपूर्ण रामायण कह दी हो। यह प्रो. गोपाल शर्मा की विद्वत्ता है। 'सूँ साँ माणस गंध' (२०१३) कविता संग्रह की बात करते हुए प्रो. गोपाल शर्मा कहते हैं, "हम इस बात को जानते हैं कि ऋषभ ने १९८३-१९९० के दौरान एक खुफिया अधिकारी के रूप में कार्य किया और वे जम्मू और कश्मीर राज्य में तैनात थे। इसलिए कश्मीर पर और उसके बारे में उनकी कुछ कविताओं को पढ़ने का हमारा तरीका और नजरिया प्रभावित होता है। यह स्वाभाविक भी है। किसी कवि को उसकी कविताओं से हटाना कभी-कभी मुश्किल हो जाता है। वह हमेशा किसी न किसी तरह से अपनी कविता में मौजूद रहता है।" इसे पढ़ते हुए मुझे अनायास प्रेमचंद याद आते हैं।

१९५४ में प्रकाशित ‘साहित्य का उद्देश्य’ में प्रेमचंद ने लिखा था, ‘कहानी में नाम और सन् के सिवा और सब कुछ सत्य है, और इतिहास में नाम और सन के सिवा कुछ भी सत्य नहीं’। ऋषभदेव शर्मा की कविताओं से भी गुजरते हुए उनकी हँसी, उनका रोष, उनकी वाक्पटुता, उनकी मुस्कुराहट, उनकी बदमाशी, उनका प्रेम इन सभी से रूबरू हुआ जा सकता है।

इस संग्रह की कविताओं को देखते हुए मिक्स फ्रूट प्लेट की याद आती है जिसमें एक ही प्लेट में कई तरह के फलों के कुछ टुकड़े सजा कर परोसे जाते हैं। खाने वाले के लिए यह बहुत ही अच्छी सुविधा है जहाँ कम पैसे में कई फलों के स्वाद का अनुभव किया जा सकता है। आम के एक टुकड़े में भी वही स्वाद, वही मिठास होगी, जो एक आम के फल में होगी। हाँ, यह संभव है कि एक टुकड़ा खा कर तृप्ति न मिले और मन पूरा फल खाने का करे। कई किताबों में फैले ऋषभदेव शर्मा के कविकर्म से चुनिंदा कविताओं को इस संग्रह के माध्यम से पाठकों के सामने रखा गया है। ‘In Other Words’ की भूमिका में प्रो. गोपाल शर्मा ने विस्तार से इन कविताओं की चयन-प्रक्रिया के बारे में लिखा है। यह कई अन्य साहित्यकारों को प्रेरित करेगी कि वे भी अपनी पसंद के अनुरूप एक नई मिक्स फ्रूट प्लेट बनाएँ। यह संग्रह या भविष्य में आने वाले ऐसे अनेक संग्रहों की सफलता सुनिश्चित है क्योंकि जिस बाग से फल तोड़कर ये मिक्स फ्रूट प्लेट बनाई जानी हैं, ऋषभदेव शर्मा के कविकर्म का वह बाग बहुत समृद्ध है। ‘‘नाना तरु फल फूल सुहाए। खग मृग बृंद देखि मन भाए।’’ जब आप ऐसे बाग से फल तोड़कर लाएँगे तो चाहे आपकी चयन-प्रक्रिया कुछ भी हो, आपकी मिक्स फ्रूट प्लेट के सभी फल रसीले, मीठे और स्वादिष्ट ही होंगे। ‘शोधादर्श’ पत्रिका के कवि पर केंद्रित विशेषांक में संकलित ५१ अन्य कविताएँ इसका प्रमाण हैं। अस्तु।

प्रो. गोपाल शर्मा एक सिद्धहस्त अनुवादक और साहित्यकार हैं इसलिए जिन कविताओं को इन्होंने अनुवाद के लिए चुना है, उनके विषय को अपने अनुवाद के माध्यम से इन्होंने विस्तार ही दिया है। उदाहरण के लिए, ‘अनुपस्थित’ कविता में ऋषभदेव शर्मा, कश्मीर में वर्तमान में क्या-क्या आज भी है का उल्लेख करते हुए अंत में लिखते हैं, ‘‘पर एक चीज है/जो सिरे से गायब है/ एक उन्मुक्त संगीत/ जो दम तोड़ रहा है/ ‘पाकिस्तान जिन्दाबाद’ के बोझ तले।’’ इसके अनुवाद में प्रो. शर्मा ‘पाकिस्तान जिन्दाबाद’ के जुमले को गायब कर देते हैं और इस कविता के अर्थ को विस्तार देते हुए ‘Absent’ शीर्षक से लिखते हैं ‘‘Nevertheless/ Something is absent altogether/ The lilting music of the valley is dying/ under the burden of the slogans of protest/ unheard before.’’ ‘भाषाहीन’ कविता में ऋषभदेव शर्मा, पिता के लिए लिखते हुए अंत में लिखते हैं, ‘‘भटक रही हूँ बदहवास आवाजों के जंगल में/ मुझे भूलनी होंगी सारी भाषाएँ/ पिता का खत पढ़ने की खातिर।’’ इसके अनुवाद में प्रो. गोपाल शर्मा लिखते हैं, ‘‘I am wandering in the forest of sounds/ to read his letter/ I have to forget all the language I learnt-/ Perhaps..’’ इस अनुवाद में अंत में जो Perhaps लिखा गया है, वह इस कविता को कई मायनों में विस्तार देता है। ऐसे कई उदाहरण हैं जो यह साबित करते हैं कि कैसे एक अच्छा अनुवादक एक बेहतरीन कविता के सौंदर्य में भी अपने अनुवाद के माध्यम से चार चाँद लगा सकता है। हाँ, एक पाठक के तौर पर तेवरी कविताओं का अनुवाद पढ़ते हुए तेवर की उपस्थिति तो दिखती है लेकिन इनकी गेयता की कमी खलती है।

यदि ऋषभदेव शर्मा की कविताओं की बात की जाए तो कई कविताएँ हैं जिन्हें पढ़ते हुए मैं हर बार चमत्कृत होता हूँ, आनंदित होता हूँ, विस्मृत सा महसूस करता हूँ, कई भावनाएँ एक साथ उद्वेलित होती हैं। ‘ओ मेरे महाप्रभुओ’ का यह अंश पढ़ते हुए मैं हर बार उत्तेजित हो उठता हूँ- ‘अब कोई नहीं बचा/सिवा मेरे!/और मैं बलि देने नहीं/बलि लेने आया हूँ।/लो, तोड़ दिए मैंने/सब वर्ग तुम्हारे बनाए हुए,/लो, तिलांजलि देता हूँ/संप्रदायों को तुम्हारे रचे हुए।/यह लो, उतारता हूँ यज्ञोपवीत।/

यह कड़ा और कंघी भी फेंकता हूँ।/छोड़ता हूँ पाँचों वक्त की नमाज।/क्रॉस को झोंकता हूँ चूल्हे में।/मिटा रहा हूँ ब्राह्मण भंगी का भेद।/खंडित करता हूँ रोटी - बेटी के प्रतिबंध!/और/लो, उतरता हूँ अखाड़े में/निहत्था/तुम्हारे साथ जूझने को/निर्णायक द्वंद्वयुद्ध में।/सुनो महाप्रभुओ!/मुझे नहीं अब तुम्हारी जरूरत,/मैं हूँ स्वयं संप्रभु/और खड़ा हूँ/तुम्हारी समस्त आज्ञाओं के विरुद्ध/

यह घोषणापत्र लेकर कि- ‘सभी महाप्रभु खाली कर दें मेरी धरती/मुझे उगाना है एक जातिहीन मनुष्य/धर्मों से परे!’

‘विस्मरण’ कविता पढ़ते हुए हर बार मेरी आँखें नम होती हैं। इस कविता का यह अंश जैसे शब्दों से नहीं, भावनाओं से लिखा गया है-

‘मैंने उसकी गोद में सिर रख दिया
दुनिया की सबसे गरम सेज अभी ठंडी नहीं हुई थी
मैंने धीरे से पुकारा - माँ
उसकी पुतलियाँ घूमीं - स्मृति लौट रही थी
उसने होंठ खोले - आवाज जा चुकी थी
कड़ुआती आँखें मींच लीं मैंने आँसू गटकने को
अहह! उसने मेरे बालों में उँगलियाँ फिराईं,
मैंने आँखें खोलीं - वह मुझे पहचान रही थी
आँखों में आँखें डाल कर मैंने काँपते स्वर में कहा - माँ, राम-राम
माँ के होंठ फड़फड़ाए - जीभ नहीं उठी
आवाज नहीं निकली - पर असीसती उँगलियाँ बोल रही थीं
माँ अंतिम क्षण की प्रतीक्षा में थी।
मुझे ट्रेन पकड़नी थी!’

यह अंतिम वाक्य ‘मुझे ट्रेन पकड़नी थी’ पढ़ते हुए हर बार लगता है, कवि ने इसे क्यों लिखा। कविता तो इस पंक्ति के लिखे जाने से पहले पूर्ण हो चुकी थी, लेकिन इस एक आखिरी पंक्ति का वजन, इस कविता की सभी पंक्तियों से ज़्यादा है। यह और इस जैसी कई चमत्कारी कविताओं का संकलन है ‘In Other Words’ या ‘इक्यावन कविताएँ’। प्रो. देवराज ने इस संग्रह के लिए यूँ ही नहीं लिखा कि ‘एक-एक कविता को अलग-अलग रूपों में सहारा देती कवि की आस्था, अवचेतन में हलचल मचाता बार-बार ऊपर उठने की कोशिश में साकार-निराकार होता संघर्ष, परिवर्तन की अदम्य चाह। इक्यावन कविताएँ....’

आजकल फिल्म ‘आदिपुरुष’ की बहुत चर्चा है विशेषकर हनुमान जी के संदर्भ में। लेकिन फिल्म से इतर यदि हम रामायण में हनुमान जी के चरित्र को देखें तो उनके सामर्थ्य पर तो किसी को कोई संदेह है ही नहीं। लंका में उन्होंने जिस तरह का उत्पात मचाया, अपनी हीरोगीरी दिखलाई और डायलॉग बोले, उसके लिए तो सुरसा ने पहले ही कह दिया था ‘‘बुधि-बल मरम तोर मैं पावा।’’ तो यह सब तो उनसे अपेक्षित था ही। लेकिन भगवान शंकर कहते हैं कि हे पार्वती, इस गंगा की गंगोत्री कहीं और है। ‘‘उमा न कछु कपि कै अधिकाई। प्रभु प्रताप जो कालहि खाई।।’’ यानी हनुमान जी ने जो कुछ किया उसमें उनका कोई विशेष श्रेय नहीं है, यह राम की कृपा है जिसकी वजह से वे ऐसा कर सके। वर्तमान संदर्भ में यदि देखें तो प्रो. गोपाल शर्मा की विद्वत्ता पर किसी को कोई संदेह नहीं, लेकिन उन्होंने जो तेईस पन्नों की प्रस्तावना लिख दी है, वह ऋषभदेव शर्मा की कविताओं में विषय की विशालता और भावों की सूक्ष्मता की वजह से ही संभव हो पाया है। उम्मीद की जानी चाहिए कि यह महज एक शुरूआत है और ऐसे ही कई और संकलन आएँगे जिनमें ऋषभदेव शर्मा की कविताओं को नए आलोक में देखा-जाँचा-परखा जाएगा।

पता- बी-४१५, गायत्री क्लासिक्स, लिंगमपल्ली, (फ्लाइओवर के नकदीक), हैदराबाद, तेलंगाना - ५०००५०. मो. ९९०८८५५५०६.
ईमेल : praveen.pranav@gmail.com

पुस्तक समीक्षा

जिद्दी और जुझारू इक्यावन कविताएँ

फणीश्वरनाथ रेणु का कथन है कि 'लेखक के संप्रेषण में ईमानदारी है तो रचना सशक्त होगी, चाहे किसी विधा की हो।' लेकिन सवाल यह है कि, लेखक कब ईमानदारी से लिख पाता है? प्रसिद्ध फिलिस्तानी कवि महमूद दरवेश ने एक बार कहा था, 'हर सुंदर कविता प्रतिरोध का बाना है'। (द्रष्टव्य- प्रस्तावना - 'इक्यावन कविताएँ : ऋषभदेव शर्मा', पृ.६)। इसी प्रकार अंग्रेजी कवि साइमन आर्मिटेज ने कहा है, 'कविता के बारे में कुछ ऐसा है जो विरोधी है... इसमें कुछ अड़ियल है। यह असहमति का एक रूप है... अपने भौतिक रूप में भी... यह दाहिने हाथ के मार्जिन तक नहीं पहुँचता है, यह पृष्ठ के निचले हिस्से तक नहीं पहुँचता है... इसमें कुछ जिद्दीपन और जुझारूपन सदा रहा है।'(वही : पृ. ६)। अर्थात, जब कवि समाज के बारे में सोचकर, देश के बारे में सोचकर लिखता है, निरपेक्ष होकर लिखता है, लेकिन जज बनने का प्रयास नहीं करता है, तब वह ईमानदारी से लिखता है। ठीक वैसे ही, जैसे कवि ऋषभदेव शर्मा (१९५७) लिखते हैं। उनकी चुनिंदा कविताओं का संग्रह 'इक्यावन कविताएँ' (२०२३, कानपुर - साहित्य रत्नाकर, १३६ पृष्ठ / २००) इसे बखूबी प्रमाणित करता है।

प्रो. गोपाल शर्मा ने इस पुस्तक के लिए कवि ऋषभदेव शर्मा की इक्यावन कविताओं का चयन ही नहीं किया है, अपितु सुविस्तृत प्रस्तावना भी लिखी है। इन कविताओं का स्वाद एक समान नहीं है लेकिन इन कविताओं को कवि की ईमानदार चेतना ने साधारण जनमानस के जीवन के साथ जोड़ दिया है। प्रो. दिलीप सिंह के पास कवि ऋषभ के स्वभाव के बारे में कहने के लिए यह है कि 'लिखते अच्छा हैं, बोलते उससे भी अच्छा हैं। उनकी आवाज में हमेशा एक आवेश-जनित खनक होती है।'(वही, पृ.१०)। यह आवेश उनकी कविता की भी पहचान है। देखें, माँ भारती को निवेदित उनकी कविता की ये पंक्तियाँ-

'काव्य को अंगार कर दे, भारती
शब्द हों हथियार, वर दे, भारती
हों कहीं शोषण-अनय-अन्याय जो
जूझने का बल प्रखर दे, भारती
सत्य देखें, सच कहें, सच ही लिखें
सत्य, केवल सत्य स्वर दे, भारती

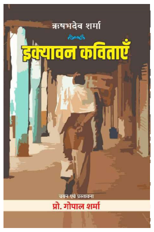

सब जगें, जगकर मिलें, मिलकर चलें
लेखनी में शक्ति भर दे, भारती
हो धनुष जैसी तनी हर तेवरी
तेवरों के तीक्ष्ण शर दे, भारती'

(ऋषभदेव शर्मा - इक्यावन कविताएँ - पृ. ४२)।

सामाजिक न्याय और सत्य की पक्षधर इस कविता की प्रासंगिकता स्वयंसिद्ध है! सही बात है क्योंकि जब तक माँ भारती के सपूत नहीं जागेंगे तब तक कैसे माँ भारती का आँचल स्वच्छ होगा! कवि का आह्वान है- 'अब न बालों और गालों की कथा लिखिए/देश लिखिए, देश का असली पता लिखिए।' (वही - पृ.४३)।

साहित्यकार को केवल आदर्श बघारने के लिए ही नहीं लिखना चाहिए क्योंकि आदर्श और यथार्थ के बीच में जब द्वंद्व उत्पन्न होता है तब यथार्थ का साथ देना ही उचित और प्रासंगिक होता है। कवि ऋषभ इस सत्य से भली भाँति परिचित हैं। 'औरतें औरतें नहीं' कविता का यह अंश देखें- 'औरत को जीतने का अर्थ है/संस्कृति को जीतना/सभ्यता को जीतना,/औरत को हराने का अर्थ है/मनुष्यता को हराना,/औरत को कुचलने का अर्थ है/कुचलना देवत्व की संभावनाओं को।/इसलिए तो/उनके लिए/औरतें जमीन हैं,/वे जमीन जीतने के लिए/औरतों को जीतते हैं!' (वही- पृ. ५०-५१)।

यह कविता संपूर्ण विश्व में हजारों स्त्री-समर्थक नियमों के बावजूद स्त्री की भयावह दशा को रेखांकित करने में समर्थ हैं।

प्रस्तुत पुस्तक में संकलित कविता 'लाज न आवत आपको' में कवि ने तुलसीदास की पत्नी रत्नावली की भावनाओं को नए रूप में प्रस्तुत किया है। पढ़ते हुए बरबस ही मैथिलीशरण गुप्त की यशोधरा और उर्मिला की याद आ गई। उन्हें पति छोड़ गए थे अपने कर्तव्य पालन हेतु, लेकिन रत्नावली ने तो पति को कर्तव्य पथ से अवगत करवाया था। फिर क्यों वह एकाकी जीवन जीने के लिए बाध्य हुई? कवि ऋषभ की कल्पना कहती है-

'तुम्हें बता बैठी तुम्हारा सच
और तुम लौट गए उल्टे पैरों
कभी न आने को!'(वही- पृ. ५७)।

हाँ, रत्नावली ने पति को सच बता देने का ही अपराध किया था। स्त्री को सच भी वही बोलना चाहिए जो पुरुष को मनभावन लगे! परंतु रत्नावली ने तो यह कह दिया कि-

'न तुमने रात देखी न बारिश,
न तुमने नाव देखी न नदी,
तुम्हें लाश भी दिखाई नहीं दी,
साँप तो क्या ही दीखता?
तुम लाश पर चढ़े चले आए।
तुम साँप से खिंचे चले आए!
न था तुम्हें कोई भय
न थी लोकलाज!
तुम पुरुष थे
सर्वसमर्थय
और समर्थ को कैसा दोष?
मैं औरत थी
पूर्ण पराधीन,
और पराधीन को कैसा सुख?' (वही- पृ. ५६)।

ऐसा माना जाता है कि स्त्री ही स्त्री-मन की भावनाओं को सजीव रूप में उकेर सकती है। लेकिन ऐसा नहीं है। कवि ऋषभ को पढ़ने से समझ आता है कि बुद्ध उसी दिन बुद्ध बने थे जिस दिन उनमें स्त्री रूपी करुणा का संचार हुआ था और धर्म को नवीन रूप में उन्होंने विश्लेषित किया था। इस कवि में भी वही आवेग है जो धार्मिक उन्माद के विरुद्ध जाकर कहता है-

'सभी महाप्रभु खाली कर दें मेरी धरती
मुझे उगाना है एक जातिहीन मनुष्य
धर्मों से परे!' (वही- पृ. १३५)।

यह कवि घुमा फिराकर बात नहीं करता। सीधी सपाट भाषा में 'पछतावा' भी प्रकट करता है, कुछ इस तरह-

'हम कितने बरस साथ रहे
एक दूसरे की बोली पहचानते हुए भी
चुप रहे
आज जब खो गई है मेरी जुबान
तुम्हारी सुनने और देखने की ताकत
छटपटा रहा हूँ मैं तुमसे कुछ कहने को
बेचैन हो तुम मुझे सुनने-देखने को
हमने वक्त रहते बात क्यों न की?' (वही- पृ. १३०)।

अंत में यही कि इन इक्यावन कविताओं का रसास्वादन यथाशीघ्र कर लेना उचित होगा, ताकि एक अच्छे संकलन को न पढ़ पाने का 'पछतावा' मन में न रहे।

-डॉ. सुपर्णा मुखर्जी
पता- हिंदी प्राध्यापिका,
भवन्स विवेकानंद कॉलेज, सैनिकपुरी,
हैदराबाद (तेलंगाना)। मो. ९६०३२२४००७
ईमेल- drsuparna.mukherjee.81@gmail.com

कविता कहाँ अनुवाद है?

(प्रो ऋषभ देव शर्मा की इक्यावन कविताओं और उनके अंग्रेजी अनुवाद का संदर्भ)

''बूढ़े सभी होते हैं, लेकिन बुढ़ापा किस पर कैसा बैठता है यह इस पर निर्भर रहता है कि उसका अपने जीवन से, अपने अतीत और वर्तमान से (और अपने भविष्य से भी क्यों नहीं?) कैसा संबंध रहता है।'' तार सप्तक (दूसरा संस्करण) की १९६३ में लिखी गई भूमिका में यह एक मार्के की बात कही गई है। कवि का युग संबंध' जानने समझने और याद रखने की चीज है। कवि सबसे पहले सामाजिक प्राणी है। व्यक्ति-विशेष को कविधर्मा से पहले उसे मानवधर्मा होना होता है तभी कोई समानधर्मा उसे आधुनिकधर्मा होते देख सकता है। आजकल 'सबका' शब्द बहुत चल निकला है। कवि ऋषभ तेवरीकार हैं, इसलिए बेसब्र रहना और होना उनका स्थायी भाव है। तभी तो मैंने सबका विशेषण लगाकर कवि का परिचय दिया है। अनुवादक ने रूप में मैंने नोट किया है कि यह 'सब' जो शब्द है वह अंग्रेजी में जाते ही उपसर्ग (sub) होकर 'आधा' का वाचक हो जाता है। 'इन अदर वर्ल्ड' में जाते ही 'वर्ड' का यह हाल हो ही जाता है, कुसूर मेरा बिल्कुल नहीं। वागर्थ की प्रतिपत्ति कवि ही नहीं करते, अनुवादक भी करते हैं। यह अनुवादक की नियति भी है।

यह काव्य-संकलन (इक्यावन कविताएँ/ In Other Words) इस संपादक की काव्य दृष्टि, साहित्यिक रुचि और साहित्यिक विवेक का प्रतिफलन है। मैं यह स्वीकार करने में कोई झिझक भी महसूस नहीं कर रहा हूँ कि मैं काव्य में कुछ ऐसी प्रवृत्तियों का व्याख्याता और वकील हूँ, जिनका मैंने जीवन भर पठन-पाठन किया है। इसलिए कविता के इस संकलन में चयन करते समय मुझे अपने विवेक से काम लेते हुए कोई भय नहीं लगा।

मैं अपने लक्ष्य पाठक के तेवर और मिजाज को मद्देनजर रखकर चयन कर रहा था। मैं यदि कवि ऋषभ की रचनाओं में से ५१ को चुनकर उन्हें अपने पाठकों के लिए प्रस्तुत कर रहा हूँ तो यह सोच-समझकर कर रहा हूँ कि मेरे लिए मेरे पाठक निकटतम हैं और कवि से मुझे एक दूरी और तटस्थता बनाए रखनी है। मैं कवि ऋषभ का माउथपीस नहीं हूँ, उनकी कविताओं का प्रस्तोता हूँ। और यदि कहीं अनधिकार चेष्टा है भी तो इतनी ही कि कवि की पॉलिटिक्स क्या है, यह रेखांकित हो जाए।

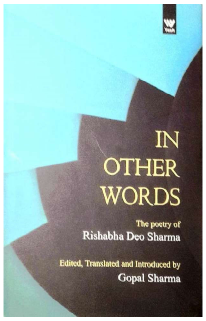

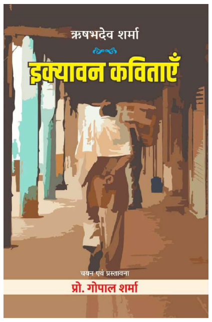

मुझे यह भी ध्यान रखना पड़ा है कि इन कविताओं के पाठकों के सामने कवि ऋषभ का शायद कोई दूसरा काव्य संग्रह मौजूद न हो। किसी कविता के चयन का आधार एक प्रश्न रहा है। कविता की नई और पाश्चात्य प्रवृत्तियों की प्रतिष्ठा करने में क्या अमुक कविता उदाहरण या आधार हो सकती है? कवि के 'मैं' से अधिक कविता के 'मैं' की मैंने चिंता की है। मुझे उन कविताओं में यहाँ गहन दिलचस्पी रही जिनमें कवि का 'मैं' नहीं, बल्कि मानव मात्र का 'मैं' विद्यमान है। यानी कवि महज एक चेहरा या परसोना है, स्वयं नटराज नहीं है। जब कवि ऋषभ अपने भोगे हुए यथार्थ से अधिक समाज के भोगे हुए यथार्थ पर निगाह ठहराता है तब वह जो कविता लिखता है, उसमें पाठक अनायास ही दिलचस्पी लेता है।

- एक व्यवस्थित अव्यवस्था/ कि लिफाफा तो है/ पर खुला है हर ओर से/ पैकेट तो है पर/ बँधा नहीं है बस,/ जैसे जबरन लपेट दिया है/ कागजों को मोटे कागज में!

-An organized disorganization/ As if the envelop is there/ But is open from all sides./ It's a package though/ Not tied compactly./ As if enveloped by force/ Scattered papers into portly ream.

इस कविता संग्रह के पाठकों से मेरी भी कुछ अपेक्षाएँ हैं। एक तो यह कि वे कविता के निहितार्थ पर खुद पहुँचें। मैंने देरिदा का स्मरण करते हुए एक सूत्र, बल्कि कहूँ तो एक पद - प्रासंगिकता - का ध्यान रखा है। हम किसी शब्द का जो अर्थ समझते हैं, वह उस शब्द की बरसों की यात्रा के उपरांत पहुँचता है। शब्द अर्थ झोली भर भर कर नहीं देते, ये तो अर्थ की ओर ले जाने का माध्यम भर हैं। अर्थ मन-मस्तिष्क में घटित होता है। यदि अनुवाद के माध्यम से वह पाठक के मन-मस्तिष्क में किंचित भी घटित होता है, तो मेरा श्रम सार्थक हुआ। अनुवाद सिद्धांत पर एक सांगोपांग पुस्तक लिख लेने के बावजूद मैं रहीम के इस दोहे को अपना आदर्श मानता हूँ-

- एकै साधे सब सधै, सब साधै सब जाय।/
रहिमन मूलहिं सींचिबो, फूलें फलै अघाय।

मूल को सींचना कहाँ तक संभव हुआ है, यह पाठक जानें। अनुवाद के आलोचक हमेशा अस्पष्टताओं की तलाश में रहते हैं। एमिली डिकिंसन की एक कविता की पहली पंक्ति है - My life closed twice before it's close. इस पंक्ति में एक उल्लेखनीय त्रुटि है। डिकिंसन ने एक अपोस्ट्रोफी 'इट्स' में लगा दिया है, जो लगाया जाना नहीं चाहिए था। कवि ऋषभ ने भी जब अनुवाद की ऐसी ही एक त्रुटि की ओर मेरा ध्यान आकृष्ट किया, तो मुझे कुछ कुछ वैसा ही लगा जैसा लगना चाहिए था। किंतु यह जानना सदैव आश्वस्त करने वाला होता है कि महान लेखक भी आम आदमियों की तरह ही होते हैं। डब्ल्यू.बी. येट्स एक बार डबलिन में एक अकादमिक पद प्राप्त करने में विफल रहे थे क्योंकि उन्होंने अपने आवेदन-पत्र में 'प्रोफेसर' शब्द की गलत स्पेलिंग लिख दी थी। जिसे प्रोफेसर शब्द की वर्तनी भी न आती हो, उसे प्रोफेसरी कौन देगा? चाहे उसे साहित्य का नोबेल पुरस्कार भले ही मिल जाए।

अनूदित पुस्तक की प्रस्तावना में मैंने बहुत कुछ पहले ही लिख दिया है। हेगेल कहा करते थे कि भूमिकाओं, व्याख्यानों और कुंजियों के चक्कर में पाठक को अधिक नहीं पड़ना चाहिए। उसे टेक्स्ट को देखना चाहिए। इसके लिए कोई 'प्रीटेक्स्ट' या बहाना नहीं करना चाहिए। मेरे सहित आज के तीन वक्ता चाहे कितना ही बोल बतिया लें, रहेंगे वे सत्य से तिहरी दूरी पर ही। और सत्य क्या है? सत्य है -इक्यावन कविताएँ और उनका अंग्रेजी में अनुवाद।

But release me from my bands/ With the help of your good hands.

'द टेम्पेस्ट' ड्रामा का पात्र प्रोस्पेरो इन पंक्तियों के माध्यम से दर्शकों से तालियाँ बजाने के लिए कह रहा है। 'अपने अच्छे हाथों की मदद से' से उनका यही तात्पर्य है। जिंदगी के नाद पर कोई अनुनाद बजे न बजे, कवि का डंका तो हमने बजा दिया। समाप्त करता हूँ

- जिंदगी के नाद पर/ बजता हुआ अनुनाद है,/
कविता कहाँ अनुवाद है !

-गोपाल शर्मा

कहानी

परिणीता

रचना तिथि - १५ जुलाई, १६७३, प्रथम प्रकाशन- जुलाई १६७६- जन साहित्य (भाषा विभाग, हरियाणा)।

ऋषभदेव शर्मा

आह! लक्ष्मण की परिणीता पत्नी को 'उन्हें' एक आँख भर देखने का भी अधिकार नहीं! हा: री लज्जा! तुझे अपनी निर्ममता पर लज्जा नहीं आई? कितनी कटु है तू, ओ पाषाण हृदये ! क्यों नहीं तूने उर्मिला की पलकों को हल्का कर दिया? नहीं, तुझे क्या आवश्यकता थी, तू तो उसे शालीनता सिखा रही थी! तूने कुछ उसके हृदय की स्थिति के विषय में भी सोचा था?

'देखिये न, माता जी, मैं कब से कह रही हूँ इन्हें कि तैयार हो जाइए, लेकिन ये सुनती ही नहीं?' कौशल्या और सुमित्रा को संबोधित करते हुए उर्मिला की अंतरंग सखी उषा ने कहा।

इस पर कौशल्या उर्मिला से कहने लगीं, 'बेटी उर्मिला, देखो, संध्या हुई जा रही है। राम और लक्ष्मण घड़ी भर बाद ही महल में आ जाएँगे, यदि वे तुम्हें इस वेशभूषा में देखेंगे तो क्या सोचेंगे? जाओ, शृंगार कक्ष में जाकर कुलवधुओं का शृंगार कर लो।'

'हाँ बहू, आज तो तुम्हारे जीवन का सबसे आनंदमय दिवस है, बहिन जी का कहा मानो।' सुमित्रा ने भी कहा।

बहुत देर से विचार-मग्न बैठी उस मूक प्रतिमा सदृश जीवित नारी - उर्मिला ने इस पर केवल 'जो आज्ञा' ही कहा और उठ खड़ी हुई। वह शृंगार-कक्ष में चली गई। माताएँ भी तैयारी में जुट गईं।

उर्मिला कक्ष में घुसी ही थी कि तभी माता कैकेयी भी वहीं आ पहुँचीं। उर्मिला ने उनके चरण-स्पर्श किए और शुभाशीर्वाद प्राप्त किया। कुछ क्षण मौन व्याप्त रहा, फिर कैकेयी बोलीं- 'बहू, तुम अभी तक इसी योगिनियों जैसे वेश में हो?'

उषा, जो उर्मिला के साथ ही आई थी, बोली - 'मैं तो बार-बार कह रही हूं, मगर मानतीं ही नहीं।'

तब कैकेयी ने कहा, 'अस्तु, आओ, इधर आओ उर्मिला! आज मैं करूंगी तुम्हारा शृंगार।'

'नहीं, माँ जी, मैं स्वयं ही कर लूंगी। आप विश्राम कीजिए।'

'हाँ, बेटी, मुझ अभागिन के स्पर्श से बचना ही ठीक है।'

'नहीं, नहीं, क्या कहती हैं आप? आपके ही शुभाशीषों से मैं आज तक जी सकी हूँ और इसी से यह शुभ दिन मुझे देखने को मिल सका है।'

उर्मिला के नेत्र अश्रुओं से भर गए थे। कैकेयी भी अपने छिपे अश्रुओं को न रोक सकीं। उन्होंने उर्मिला को अंक में भर लिया। कुछ समय स्थिति ऐसी ही रही। - अस्तु, कैकेयी उर्मिला से विदा पाकर चली गईं।

मन:स्थिति को संभाल कर उर्मिला ने उषा से पूछा- 'क्यों उषे! शृंगार का सौन्दर्य पर क्या प्रभाव पड़ता है?'

'यह भी कोई पूछने की बात है। शृंगार तो रूप के सोने में सुहागे का कार्य करता है।'

'लेकिन यह तो बताओ कि यह भौतिक और शारीरिक सौन्दर्य का शृंगार आत्मा को भी परिष्कृत करता है या नहीं?'

आह! वातावरण एकाएक कितना गम्भीर हो गया था! उषा सोचती रही, फिर बोली - 'बस, ये दर्शन की बातें तुम्हीं जानो। इन चौदह वर्षों में तुम तो पूरी अध्यात्म-वैज्ञानिक बन गई हो। भला मैं आत्मा को क्या समझूँ? मैं तो केवल इतना ही कह सकती हूं कि शृंगार-रहिता नारी केवल नारी ही है, कामिनी नहीं।'

'आह! कैसी भूल करती हो, उषे, तुम? मैं कामिनी बनकर उन निष्काम कर्म रत महाव्रती को कर्तव्य-च्युत करने का प्रयास करूँ? असम्भव! नितान्त असम्भव!!'

बस, उर्मिला विचारों में खो गई, किंकर्तव्यविमूढ़ा उषा पहले तो देखती रही, फिर धीरे से बोली - 'माता जी को जाकर क्या कह दूं?'

उर्मिला चौंक गई, उसने कह दिया- 'अच्छा, मैं शृंगार कर रही हूं, तुम जाओ।'

वह चली गई। उर्मिला- उदास सी उर्मिला- दर्पण के सामने आकर अनमनी सी खड़ी हो गई। उस पुरातन दर्पण में अपनी आकृति का प्रतिबिंब देखकर वह आज चौंक गई। कारण? कारण बस वही जाने। ..

वह सोच रही थी - 'मैं कितनी बदल गई हूं इन वर्षों में? लेकिन यह दर्पण ज्यों का त्यों है। मेरा वह सौन्दर्य कहां लुप्त हो गया जिस पल अपने अल्हड़पन में मैंने कभी गर्व किया था। मेरी आँखों में मुझे ही लजा देने वाले वे भाव कहाँ हैं जो उस दिन उन गोरे सुकुमार अपरिचित किशोर को देखकर जनकपुर की अट्टालिका के झरोखे से झाँकती हुई इनमें उमड़े थे?

प्रतिक चित्र वैबदुनिया से साभार

'अहा ! वह प्रथम दर्शन ? मैंने तभी उन्हें अपना सर्वस्व सौंप दिया था - मेरी आत्मा आज भी साक्षी है। सच्चा प्यार कभी निष्फल नहीं होता। मेरे जीवन का सूनापन दूर करने के लिए प्रेम-प्रदीप को अपनी आकर्षक आंखों में संजोये वही रूपवान किशोर लक्ष्मण मेरे प्राणधन बनकर मुझे प्राप्त हुए। मैं धन्य हो गई लक्ष्मण मेरे परिणेता हुए और मैं उनकी प्रिया परिणीता।..'

इन्हीं अतीत के भावनामय चित्रों में वह खोई रही, अब स्वयं से कुछ पूछ रही थी और स्वयं ही उत्तर भी देती जा रही थी- 'सब मुझे शृंगार-प्रसाधनों से इस नश्वर शरीर को अलंकृत करने को कहते हैं। लेकिन मैं पूछती हूं कि, क्या ज्ञानमय है? उन मेरे प्रियतम की दृष्टि अब तक बहुर्मुखी ही है? उनकी दृष्टि क्या काया के अनित्य और असत्य सौन्दर्य पर ही केन्द्रित होगी? नहीं.. नहीं.. उनकी दृष्टि तो अन्तर्मुखी हो चुकी है। वे यह खूब जानते हैं कि प्रेम शरीरों की क्रीड़ा नहीं, आत्मा का आत्मा के प्रति मूक निवेदन है।

'मैं पूछती हूं, क्या अंगों की सुडौलता, उसका आकर्षण और फिर उसका सुडौलता से संघर्षण ही प्रेम सुधापूरित जीवन का एक मात्र लक्ष्य होना चाहिए? नहीं... नहीं..! कारण? कारण कि इस सबसे प्राप्त होने वाला आनन्द 'आनन्द' नहीं वरन् उसकी कृत्रिम छाया मात्र है। प्रेम की पूर्ति तो आत्माओं के पावन सम्मिलन में और उनमें भावनाओं के सुखमय अनुभूति पूर्ण संघर्षण में है, जो प्रेमिका और प्रेमी की आत्माओं के मध्य कण भर स्थान न रहने पर होता है। जहाँ

‘दो’ का प्रश्न ही नहीं। ...जहां सब कुछ एकाकार हो जाता है, वहीं वह स्थिति उत्पन्न हो सकती है जिसमें प्रेमी शरीर के निकट या दूर रहने से कोई अन्तर नहीं आता, अन्तराल महत्वहीन हो जाता है। बस प्रतिक्षण आत्मा आत्मा का साक्षात्कार करके उसमें लीन होती हुई प्रेम की पूर्णता प्राप्त करती है।

‘क्यों न मैं अपने जीवन को इसी ढाँचे में ढाल लूं? संभवतः मेरी आत्म-साधना पूर्ति के छोर पर है क्योंकि कभी-कभी मुझे विश्वास ही नहीं होता कि प्राणधन लक्ष्मण मुझसे कहीं दूर गए हुए हैं।’

हाँ, वस्तुतः उर्मिला की साधना पूर्ण हो चुकी थी। वह भावुकता में कह रही थी- ‘प्राणेश, अब न छोड़ूंगी तुम्हें! तुम इस पंचभौतिक शरीर को लिए कहीं घूमो, लेकिन मेरे अंतःकरण में जहाँ तुम परमात्मा बनकर समाये हुए हो- जहाँ तुम पर मेरा एकाधिपत्य है - वहाँ से न जा सकोगे।’

उर्मिला को आभास हुआ कि तभी किसी ने प्रणयसिक्त स्वर में पुकारा- ‘उर्मिले!’ वह चौंक गई ... ‘यह तो उनका स्वर है?’ तभी पुनः उसने सुना- ‘उर्मिले! अब तक तुम अपनी साधना में रत रहीं, मैं अपनी। - लेकिन मैं तुम्हें भूल नहीं सकता - भूलने का प्रयास भी मैंने कभी नहीं किया। क्योंकि पावन अग्नि के सम्मुख भव्य परिणय मण्डप में मैंने तुम्हारा हाथ थामा है . . उर्मिले!’

इस बार उर्मिला ने चौंककर इधर-उधर नहीं देखा क्योंकि वह अपने अंतःकरण से बोल रहे लक्ष्मण को पहचान चुकी थी। वह भाव विभोर हो गई, अतीत के दृश्यों में खोने लगी- प्रथम दर्शन, परिणय दृश्य, वधू उर्मिला, वर लक्ष्मण, सप्तपदी, विदा, प्रणय-सिक्त वार्तालाप और फिर- फिर - वनवास हेतु प्रस्थान! सभी कुछ एकाएक उसकी आंखों के आगे घूम गया। उसे याद आया कि वन-गमन के समय उसके पतिदेव उसके समीप आए थे... वह रो रही थी, वे समझा रहे थे। उस दिन उन्होंने साक्षात् कर्तव्य का रूप धारण कर रखा था। लेकिन इस रूप में भी वे उर्मिला को भुला न पाए थे।... उर्मिला को आभास हुआ था कि उनकी पलकें गीली हो रही हैं। उसकी सिसकियाँ तेज हो गईं। वे समझाते रहे और फिर. ..

...और फिर चौदह वर्ष की लम्बी अवधि के लिए अपनी पत्नी से विदा लेकर चले गए। वह फिर भी रोती रही। आज तक रोती रही है... रोना उसके जीवन का अंग सा बन गया। अब चौदह वर्ष पूरे हो चुके हैं, ‘वे’ अपने भाई और भाभी के साथ अवध आ रहे हैं।

उर्मिला अभी न जाने क्या-क्या सोचती कि तभी तीनों माताएँ उषा के साथ उसी कक्ष में प्रविष्ट हुईं। उसे उसी वेश में देखकर उन्हें आश्चर्य हुआ - ‘यह वेदना और पीड़ा के निरन्तर सहवास से कितनी पागल सी हो गई है? कुछ सूझता ही नहीं इसे तो।’ अब शृंगार का समय ही कहाँ था? वे उर्मिला को उसी भूषा में साथ लेकर आगतों का स्वागत करने चल पड़ीं।

सजी हुई धरती के मंगल-गीतों से आकाश गूँज रहा था और प्रतिध्वनि प्रस्तुत करके अपना हर्ष प्रकट कर रहा था। राजकुल की स्त्रियाँ राम, लक्ष्मण और सीता की अगवानी करने जा रही थीं।...

बिछुड़े हृदय एक महान अंतराल के उपरान्त जब मिलते हैं तो संभवतः उस समय का दृश्य रसातीत होता है। उस समय प्राप्त होने वाली शक्ति, हृदय में उमड़ती हुई पावन भाव-मंदाकिनी और प्रेमी जन को बाँहों में भर लेने की अद्भुत उत्कंठा अपना विशिष्ट अस्तित्व रखती है।... लेकिन...

... लेकिन जिसे ऐसे में भी विश्व की, कठोर समाज की परंपराओं की जंजीरों में जकड़ा रहना पड़ता हो, उसके मानस में कौन सा तूफान उमड़ता होगा? संभवतः प्रत्येक व्यक्ति नहीं समझ सकता उस पीड़ा को, जो उर्मिला को अपने उस प्रियतम को, जिसका वह अभी आत्मा में सूक्ष्म साक्षात्कार कर रही थी, अपने सम्मुख खड़े देखकर हुई। नहीं-नहीं... देखकर कहाँ ? हूक तो तब जगी थी जब राज-परिवार की निर्मम मान्यताओं से बोझिल उसकी पलकें बहुत चाहने पर भी उठ न सकीं।

आह! लक्ष्मण की परिणीता पत्नी को ‘उन्हें’ एक आँख भर देखने का भी अधिकार नहीं! हाः री लज्जा! तुझे अपनी निर्ममता पर लज्जा नहीं आई? कितनी कटु है तू, ओ पाषाण हृदये ! क्यों नहीं तूने उर्मिला की पलकों को हल्का कर दिया? नहीं, तुझे क्या आवश्यकता थी, तू तो उसे शालीनता सिखा रही थी! तूने कुछ उसके हृदय की स्थिति के विषय में भी सोचा था? नहीं, क्योंकि उन स्पन्दनों तक तेरी गति ही नहीं थी। ...हाँ, यहीं तो भाग्य के अस्तित्व को स्वीकार करना पड़ता है।- निस्सहाय उर्मिला की आँखें भर आईं। लेकिन वातावरण का विचार तब भी बना रहा। उसकी आंखों से एक भी आँसू न निकल सका!

लेकिन . . . लेकिन . . . बधाई... शुभ संयोग.. . तभी न जाने कैसे लक्ष्मण और उर्मिला की आँखें क्षण भर को मिल गईं। प्रियतम की आंखों में समाये अपने ही विचित्र विवशतापूर्ण चित्रों को देखकर उर्मिला (सम्भवतः प्रसन्नता के अतिरेक में) चकरा सी गई। वह गिर ही जाती, यदि सीता उसे सँभाल न लेतीं।

...

अमा-निशा के कृष्ण हृदय को आलोक से आप्लावित करती हुई अवधपुरी ने अब अमरावती का रूप धारण कर रखा था। सरयू भी आज नभ-नदी से स्पर्धा कर रही थी।... ठीक है कि वह अवधपुरी ही थी, अमरावती नहींय लेकिन अपने उच्च्व शिखरों पर दीपमाला जलाकर वह शची पति की विहार नगरी को चुनौती दे रही थी.. लेकिन लेकिन... यह भी तो सम्भव है कि वह आज अपने प्रिय सीता-राम के आ जाने का शुभ संदेश स्वर्गवासी दशरथ को दे रही हो। वह शायद उनसे कह रही हो कि भ्रातृ प्रेम की वेदी पर जीवन के समस्त सुखों को होम करने वाले यतिवर लक्ष्मण आज साकेत लौट आये हैं।... वह शायद कह रही हो कि अब तो उर्मिला को अपने प्रिय से मिलने की अनुमति दे दो!

हाँ, अर्द्धविक्षिप्त सी आनन्दविभोर उर्मिला यों ही अकेली बैठी कुछ गुनगुना रही थी। उसे मालूम नहीं था कि उषा उसके पीछे ही खड़ी है। उसके गुनगुनाने का स्वर धीरे-धीरे उभर रहा था - ‘अमा निशा के अन्धकार में, शून्यान्तर आलोकित करकेय जीवन धन्य करो, जीवनधन! मम प्रदीप को स्वीकृत करके।’

ये शब्द सुनकर उषा विवश हो कह उठी- ‘अहा, क्या सुन्दर भाव हैं ?’ ‘ऐं!? कौन उषे! तुम?’

‘हाँ, मैं हूँ।... वस्तुतः दार्शनिक होने के साथ-साथ एक भावुक कवयित्री भी हो तुम।’

‘बनाओ न, उषे!’

‘मैं बनाती नहीं, वास्तविकता बताती हूं।’

‘नहीं ! यथार्थ तो केवल यही है कि उर्मिला ने केवल पीड़ा और वेदना भोगने के लिए ही इस भू पर जन्म लिया है।..’

‘लेकिन उर्मिले! अब वह तुमसे नितान्त पृथक हो जायेगी।’

‘क्या कहा जा सकता है, इस विषय में?’

‘कहा क्यों नहीं जा सकता, प्रिये! रजबकि मैं तुम्हारे साथ हूँ- सशक्त होकर- भावुक होकर।’

यह कौन? चौंक उठी उर्मिला। उसने देखा कि अब उषा वहाँ नहीं थी। वहाँ तो उसके प्रियतम नयनों में अनुराग भरे खड़े थे। वह उनके पैरों में झुकने लगी, लेकिन उन्होंने उसे उठाकर अपनी बाँहों में भर लिया। उर्मिला को लगा कि वे कह रहे थे- ‘मैं तुम्ह भूल नहीं सकता।... भूलने का प्रयास भी मैंने कभी नहीं किया। क्योंकि पावन अग्नि के सम्मुख भव्य परिणय-मण्डप में मैंने तुम्हारा हाथ थामा है.. - उर्मिले.. !’

वह अपने अश्रुओं से उनके वक्ष को भिगो रही थी।

○

RNI UPHIN/2018/77444 ISSN 2582-1288
₹ 200
शोधादर्श
संदर्भित एवं समीक्षित शोध आलेखों की त्रैमासिक पत्रिका

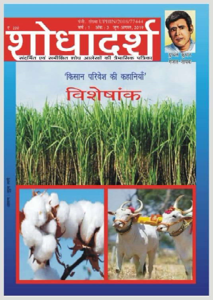

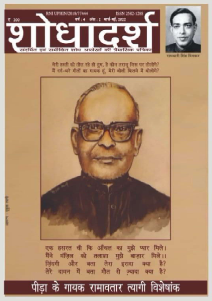

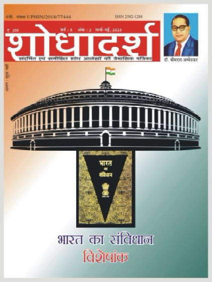

शोधादर्श में प्रकाशित विज्ञापन रेट

क्रम	विज्ञापन स्थान संपूर्ण पृष्ठ	मूल्य रुपए में	विज्ञापन स्थान आधा पृष्ठ	मूल्य रुपए	विज्ञापन स्थान चौथाई पृष्ठ	मूल्य रुपए
1	कवर पृष्ठ अंतिम (रंगीन)	26,000.00	कवर पृष्ठ अंतिम (रंगीन)	13,000.00	कवर पृष्ठ अंतिम (रंगीन)	7,000.00
2	कवर पृष्ठ २ या ३ (रंगीन)	22,000.00	कवर पृष्ठ २ या ३ (रंगीन)	11,000.00	कवर पृष्ठ २ या ३ (रंगीन)	6,000.00
3	आन्तरिक पृष्ठ (रंगीन)	20,000.00	आन्तरिक पृष्ठ (रंगीन)	10,000.00	आन्तरिक पृष्ठ (रंगीन)	5,000.00
4	श्वेत श्याम पृष्ठ	10,000.00	श्वेत श्याम पृष्ठ	5,000.00	श्वेत श्याम पृष्ठ	2,500.00

तकनीकी जानकारी- आकार- २१.५x२७.५ सेमी, प्रिंट एरिया- १८x२५ सेमी, कॉलम- ३ (कॉलम की चौड़ाई ५.५ सेमी.) लगभग पृष्ठ- आवरण सहित १००

नियमित ग्राहक बनें

RNI UPHIN/2018/77444 ISSN 2582-1288
₹ 200
शोधादर्श
संदर्भित एवं समीक्षित शोध आलेखों की त्रैमासिक पत्रिका

SHODHADARSH
Bank
Indian Overseas Bank,
Branch-Najibabad
AC- 368602000000186
IFSC- IOBA0003686

RNI- UPHIN/2018/77444 ISSN 2582-1288

समयावधि	रुपए डाक खर्च सहित	पीडीएफ/प्रिंट अंक	विशेषांक
वार्षिक	- १०००	४	१
द्विवार्षिक	- १६००	८	२
पंचवार्षिक	- ४५००	२०	५

रजिस्टर्ड पता- ए/7, आदर्श नगर, तातारपुर लालू, नजीबाबाद-246763 बिजनौर, उप्र
संपादकीय कार्यालय- साईं एंक्लेव, निकट धनौरा देवता, नजीबाबाद-246763 बिजनौर, उप्र
Email- shodhadarsh2018@gmail.com Mob.- 9897742814

https://www.shodhadarsh.page

RNI UPHIN/2018/77444 ISSN 2582-1288
₹ 200
शोधादर्श
संदर्भित एवं समीक्षित शोध आलेखों की त्रैमासिक पत्रिका

अंक- जून-अगस्त, २०२३ होने वाला है खास

मतलब आप पढने वाले हैं

'राष्ट्रीय सुरक्षा और संविधान' विशेषांक

जिसके विषय होंगे-

१. नक्सलवाद
२. आतंकवाद
३. जातिवाद
४. भ्रष्टाचार
५. क्षेत्रवाद/नृजातिय
६. सामाजिक अन्याय
७. आर्थिक सुरक्षा
८. ऊर्जा सुरक्षा
६. पर्यावरण सुरक्षा
१०. खाद्य सुरक्षा
११. मानव सुरक्षा
१२. साईबर सुरक्षा
१३. संवैधानिक सुरक्षा
१४. आर्थिक सुरक्षा
१५. बाल एवं महिला सुरक्षा
१६. राजनीति और राष्ट्रीय सुरक्षा

या फिर वो जो आप चाहें

लेख भेजने की अन्तिम तिथि - २५ जून, २०२३

अतिथि संपादक – डॉ. दिनेश कुमार गुप्त
संपादक – अमन कुमार

मेल आईडी- shodhadarsh2018@gmail.com
संपर्क एवं व्हाट्सअप– 9897742814

क्रम	विज्ञापन स्थान संपूर्ण पृष्ठ	मूल्य रुपए में	विज्ञापन स्थान आधा पृष्ठ	मूल्य रुपए	विज्ञापन स्थान चौथाई पृष्ठ	मूल्य रुपए
1	कवर पृष्ठ अंतिम (रंगीन)	26,000.00	कवर पृष्ठ अंतिम (रंगीन)	13,000.00	कवर पृष्ठ अंतिम (रंगीन)	7,000.00
2	कवर पृष्ठ २ या ३ (रंगीन)	22,000.00	कवर पृष्ठ २ या ३ (रंगीन)	11,000.00	कवर पृष्ठ २ या ३ (रंगीन)	6,000.00
3	आन्तरिक पृष्ठ (रंगीन)	20,000.00	आन्तरिक पृष्ठ (रंगीन)	10,000.00	आन्तरिक पृष्ठ (रंगीन)	5,000.00
4	श्वेत श्याम पृष्ठ	10,000.00	श्वेत श्याम पृष्ठ	5,000.00	श्वेत श्याम पृष्ठ	2,500.00

तकनीकी जानकारी- आकार- २१.५x२७.५ सेमी, प्रिंट एरिया- १८x२५ सेमी, कॉलम- ३ (कॉलम की चौड़ाई ५.५ सेमी.) लगभग या आवश्यकतानुसार

नियमित ग्राहक बनें

RNI UPHIN/2018/77444 ISSN 2582-1288
₹ 200
शोधादर्श
संदर्भित एवं समीक्षित शोध आलेखों की त्रैमासिक पत्रिका

SHODHADARSH
Bank
Indian Overseas Bank,
Branch-Najibabad
AC- 368602000000186
IFSC- IOBA0003686

RNI- UPHIN/2018/77444 ISSN 2582-1288

समयावधि	रुपए डाक खर्च सहित	पीडीएफ/प्रिंट अंक	विशेषांक
वार्षिक	- १०००	४	१
द्विवार्षिक	- १६००	८	२
पंचवार्षिक	- ४५००	२०	५

रजिस्टर्ड पता- ए/7, आदर्श नगर, तातारपुर लालू, नजीबाबाद-246763 बिजनौर, उप्र
संपादकीय कार्यालय- साईं एंक्लेव, निकट धनौरा देवता, नजीबाबाद-246763 बिजनौर, उप्र
Email- shodhadarsh2018@gmail.com Mob.- 9897742814